कुछ बातें

भारतीय इतिहास के मुस्लिम काल में दारा के समान वैभव और शक्ति की चरम सीमा तथा कंगाली और कष्ट की पराकाष्ठा तक पहुँचने वाला पात्र दूसरा कोई नहीं है। हिंदु-मुस्लिम एकता के लिए उस महापुरुष ने अपने जीवन की बलि दे दी। उस समय दारा का जो स्वप्न-भंग हुआ वह आज तक भंग ही पड़ा है। मैंने अपने नाटकों द्वारा राष्ट्रीय एकता के भाव पैदा करने का प्रयत्न किया है। मेरे इन लघु यत्नों को राष्ट्र-यज्ञ में क्या स्थान मिलेगा, यह मैं नहीं जानता। यह नाटक भी इस राष्ट्र-यज्ञ में डाली गई एक आहुति है।

मेरा यह छठा नाटक है। मेरे पिछले 'स्वर्ग-विहान' 'पाताल-विजय', 'रक्षा-बंधन', 'शिवा-साधना' और 'प्रतिशोध' नामक नाटकों का हिंदी-जगत् ने स्वागत कर मुझे प्रोत्साहित किया है, किंतु, मेरा जीवन अनेक संकटों में पड़ा रहा, इस कारण मैं 'भारती' के मंदिर में उत्तम रूप में और उचित मात्रा में पुष्प नहीं चढ़ा सका हूं, इसका मुझे खेद है। मेरे हृदय में एक आग

सी सुलगती रहती है, किंतु उसे व्यक्त करने को मेरे पास अव-काश नहीं है। इस विपत्ति-काल में भी मेरी वीणा मौन नहीं है, मेरे मित्र तो इसे भी आश्चर्य्य के साथ देखते हैं। मैंने इन नाटकों में भाव दिए हैं, कला दी या नहीं, यह कलाविद देखें, मुझे देखने की फ़ुरसत नहीं है। हाँ, इतना प्रयत्न तो मैं करता ही हूं कि नाटक रंगमंच के उपयुक्त रहें, जन-साधारण की पहुँच के बाहर न हों और उनमें रसानुभूति का अभाव न हो।

इस नाटक में पात्रों की संख्या थोड़ी है। दारा, औरंगज़ेब, शाहजहाँ और प्रकाश पुरुष-पात्रों में तथा जहानारा, रोशन आरा, नादिरा और वीणा स्त्री-पात्रों में बार-बार रंग-मंच पर आते हैं। शुजा, मुराद, जयसिंह, जसवंतसिंह और महारानी महामाया आदि इस कथा से संबंधित अनेक पात्रों को मैं रंग-मंच पर नहीं लाया। यदि पात्रों की संख्या बढ़ा देता तो नाटक बड़ा भी हो जाता और मुख्य पात्रों का पूरा विकास भी न हो पाता। इस नाटक का घटना-काल थोड़ा ही है। दारा का सम्पूर्ण जीवन-चरित्र न अंकित कर केवल अन्तिम दिनों में उसका औरंगज़ेब से जो संघर्ष हुआ है, उसी को चित्रित किया गया है।

मैंने अपने अन्य नाटकों में यह नियम रखा है कि हिंदु-पात्रों की भाषा हिंदी तथा मुस्लिम पात्रों की उर्दू रखी जाय। यह नाटक इसका अपवाद है। इसके लगभग सभी पात्र मुसलमान

हैं, उनकी भाषा उर्दू रखने से नाटक हिंदी-भाषियों के काम का न रहता। उर्दू का मैं पंडित भी नहीं, इसलिए उस स्थिति में भूलें भी रह जातीं।

नाटक जैसा भी कुछ है, पाठकों के सामने है। मुझे विश्वास है कि पाठक मुझे प्रोत्साहित करेंगे।

हरिकृष्ण 'प्रेमी'

पात्र-परिचय

प्रधान पुरुष-पात्र

दारा ... शाहजहाँ का सबसे बड़ा पुत्र।

औरंगज़ेब ... शाहजहाँ का आयु के हिसाब से तीसरा पुत्र।

शाहजहाँ ... मुगल-सम्राट।

छत्रसाल हाड़ा ... दारा का मित्र, बूंदी-नरेश।

प्रकाश ... एक बूढ़ा मज़दूर

गौण पात्र

मोहम्मद (औरङ्गज़ेब का पुत्र), शहनवाज़खाँ (औरंगज़ेब का ससुर), खलीलुल्लाहखाँ, कासिमखाँ, दिलेरखाँ, रामसिंह राठौर (चारों शाही सेना के सेनापति), एक मौलवी, एक राजपूत सेनाध्यक्ष, सैनिक, बच्चे आदि।

प्रधान स्त्री-पात्र

जहानारा	...	शाहजहाँ की बड़ी पुत्री ।
रोशन आरा	...	शाहजहाँ की छोटी पुत्री ।
नादिरा	...	दारा की पत्नी ।
वीणा	...	प्रकाश की पोती ।

गौण स्त्री-पात्र

सलीमा (नादिरा की दासी), राधा (मालिन), दासी, संदेश-वाहिका आदि ।

स्वप्न-भंग

पहला अंक

पहला दृश्य

[आगरा का किला। दारा का महल। विलास-सामग्रियों से सुसज्जित विशाल भवन के मध्य रेशम की डोरी के झूले पर रत्न-खचित स्वर्ण–पालना बिछा हुआ है। कुछ दूर एक कोने में हाथी-दाँत की बनी तिपाही पर सुराही और प्याले आदि रखे हैं। नादिरा पालने पर बैठी हुई है दासियाँ पंखा झल रही हैं। दाहिनी ओर सलीमा वीणा पर गीत गा रही है।]

सलीमा:—(गान)

हम जग में मुसकाती आवें,
हम जग से मुसकाती जावें,
जैसे नभ में ऊषा आती,
अवनि-गगन को लाल बनाती,
कुंज-कुंज में फूल खिलाती

हम भी जग का हृदय खिलावें।
हम जग में मुसकाती आवें।
हम जग से मुसकाती जावें।

चाँद सुधा बरसाता आता।
विमल चाँदनी-सेज बिछाता।
मन-मन में तूफ़ान उठाता।

हम भी सुख का ज्वार उठावें।
हम जग में मुसकाती आवें।
हम जग से मुसकाती जावें।

सखि, हम ऊषा-सी मुसकावें,
शशि-सा मादक रूप दिखावें,
फूलों-सी फूली न समावें,

कोयल-सी पागल बन गावें।
हम जग में मुसकाती आवें।
हम जग से मुसकाती जावें।

नादिरा:—वाह सलीमा, तुम मेरी जीवन-वाटिका की कोयल हो, मेरे जीवन के सुख-दुख तुम्हारे गीतों में गूँजते रहते हैं। स्वर के निर्झर में स्नान कराने के साथ ही सुराही का लाल पानी भी तो दो।

[सलीमा गाना बन्द करके सुराही से मदिरा ढाल कर लाती है।]

सलीमा:—लीजिए! क्या सुराही के लाल पानी में हिन्दुस्तान की होने वाली मलिका नादिरा की आँखों से भी ज्यादा नशा है।

नादिरा:—(प्याला हाथ में लेकर) नादिरा की आँखों में नशा! (एक घूँट पीकर) सलीमा! कोई भी नशा बहुत समय तक नहीं रह पाता! (दासियों से कहती है) पालना उतार कर ले जाओ। (पालने से उतर जाती है। दासियाँ पालना उतार कर ले जाती हैं। कमरे में नादिरा और सलीमा रह जाती हैं।) हाँ, तो, सलीमा, तुम गा रही थीं। 'हम जग में मुसकाती आवें।' हम जग से मुसकाती जावें (तुम्हारा यह स्वप्न कितना सुन्दर है, किन्तु·······

सलीमा:—किंतु क्या?

हैं। संसार ईर्षा करे तो करे, लेकिन शाहंशाह के स्नेह और मुग़ल बादशाहत के सम्पूर्ण वैभव पर शाहज़ादा दारा का अधिकार स्वाभाविक है और उचित भी, तिस पर राजपूत राजाओं का उन्हे विश्वास प्राप्त है। आपको आशंका क्यों ?

नादिरा:—आशंका क्यों ! आज यह सोचने की भी ज़रूरत पड़ गई है कि मुग़ल साम्राज्य के सम्पूर्ण वैभव और शाहंशाह के स्नेह पर हमारा अधिकार स्वाभाविक और उचित है, क्या यही बात अस्वाभाविक नहीं है, क्या यही आशंका के लिए पर्याप्त कारण नहीं है ? बोलो सलीमा ! बोलो बहन !

सलीमा:—मैं क्या कहूं, बहन ! आपने मुझ दासी को बहन कहने का अधिकार दिया है क्या इसी से मुझ में राजनीति को समझने की योग्यता आगई है ? मुझ से ये बातें क्यों पूछती हैं ?

नादिरा:—इसलिये कि तू गाती है—'हम जग में मुसकाती आवें हम जग से मुसकाती जावें'। लेकिन बहन, हमें अपनी मुसकान पर भी कोई अधिकार नहीं है। खुदा ने मुझे जितना सुख इस समय दे रखा है, हिन्दुस्तान की मलिका बनने पर क्या इससे कुछ ज्यादा पा सकूंगी ? सलीमा, शाहंशाह की बीमारी बढ़ती जा रही है। ऐसा जान पड़ता है, भयानक काली रात मुँह खोले चली

आ रही है, विपत्ति की आँधी क्षितिज पर प्रतीक्षा कर रही है। और सलीमा मैंने तो आज तक दुख को जाना भी नहीं। धन के बल पर ग्रीष्म की घोर दोपहरी को वसंत की मादक रात बना कर रही हूं। अपना भी मदिरा का पात्र भरने का कष्ट मैंने नहीं किया। मेरे पैरों ने मखमल या नरम दूब से अधिक कठोर वस्तु का परिचय नहीं पाया। ऐसा जान पड़ता है कि मेरी आँखों का नशा उतरने.. ...।

सलीमा:—(बीच में ही रोक कर) रहने भी दो बहन ! कल की चिंता में हम आज को क्यों बर्बाद करें। चलो ज़रा बागीचे की सैर कर आवें। (हाथ पकड़ कर ले जाती)

(पट–परिवर्तन)

दूसरा दृश्य

[स्थान—ताजमहल का सामने वाला चबूतरा। समय—संध्या। एक कोने में १५-१६ वर्ष की मालिन-बाला फूलों की माला गूंथ रही है। आकाश रक्त-रंजित है, अस्तंगत सूर्य की अंतिम किरणें संगमरमर के ताजमहल के किसी-किसी भाग को चमका कर वातावरण को मानों गूढ़ रहस्य से भर रही हैं। मालिन-बाला के भोले, सुन्दर और सुकुमार मुख पर भी दो-एक सूर्य-रश्मियाँ पड़ रही हैं।

उसके फूल से कोमल हाथ डलिया से एक-एक फूल उठा कर माला गूंथने में निरत हैं और उसके अधर, मुसकराते हुए, प्राणों का अबोध संगीत प्रवाहित कर रहे हैं। फूलों की सुरभि से अधिक माधुर्य्य लिए उसका गीत वायुमंडल में बह रहा है।]

मालिन:—(गाती है)

फूल जगत् में क्यों आते हैं ?

जब आते मुसकाते आते,
वन-वन में सौरभ फैलाते,
पा संदेश मधुप आ जाते,
कानों में कुछ गुन-गुन गाते।

मधु पीकर, फिर उड़ जाते हैं।
फूल जगत् में क्यों आते हैं ?

इन्हें देख मानव ललचाते,
तोड़-तोड़ डलिया भर लाते,
हृदय छेदकर, हार बनाते,
हार बना, फूले न समाते।

पात्र-परिचय

प्रधान पुरुष-पात्र

दारा ... शाहजहाँ का सबसे बड़ा पुत्र।

औरंगज़ेब ... शाहजहाँ का आयु के हिसाब से तीसरा पुत्र।

शाहजहाँ ... मुगल-सम्राट।

छत्रसाल हाड़ा ... दारा का मित्र, बूंदी-नरेश।

प्रकाश ... एक बूढ़ा मज़दूर

गौण पात्र

मोहम्मद (औरङ्गज़ेब का पुत्र), शहनवाज़खाँ (औरंगज़ेब का ससुर), खलीलुल्लाहखाँ, कासिमखाँ, दिलेरखाँ, रामसिंह राठौर (चारों शाही सेना के सेनापति), एक मौलवी, एक राजपूत सेनाध्यक्ष, सैनिक, बच्चे आदि।

उसके फूल से कोमल हाथ डलिया से एक-एक फूल उठा कर माला गूंथने में निरत हैं और उसके अधर, मुसकराते हुए, प्राणों का अबोध संगीत प्रवाहित कर रहे हैं। फूलों की सुरभि से अधिक माधुर्य्य लिए उसका गीत वायुमंडल में वह रहा है।]

मालिन:—(गाती है)

फूल जगत् में क्यों आते हैं ?

जब आते मुसकाते आते,
वन-वन में सौरभ फैलाते,
पा संदेश मधुप आ जाते,
कानों में कुछ गुन-गुन गाते।

मधु पीकर, फिर उड़ जाते हैं।
फूल जगत् में क्यों आते हैं ?

इन्हें देख मानव ललचाते,
तोड़-तोड़ डालिया भर लाते,
हृदय छेदकर, हार बनाते,
हार बना, फूले न समाते।

पात्र-परिचय

प्रधान पुरुष-पात्र

दारा ... शाहजहाँ का सबसे बड़ा पुत्र।

औरंगज़ेब ... शाहजहाँ का आयु के हिसाब से तीसरा पुत्र।

शाहजहाँ ... मुगल-सम्राट ।

छत्रसाल हाड़ा... दारा का मित्र, बूंदी-नरेश।

प्रकाश ... एक बूढ़ा मज़दूर

गौण पात्र

मोहम्मद (औरङ्ग़ज़ेब का पुत्र), शहनवाज़खाँ (औरंगज़ेब का ससुर), खलीलुल्लाहखाँ, कासिमखाँ, दिलेरखाँ, रामसिंह राठौर (चारों शाही सेना के सेनापति), एक मौलवी, एक राजपूत सेनाध्यक्ष, सैनिक, बच्चे आदि।

प्रधान स्त्री-पात्र

जहानारा	...	शाहजहाँ की बड़ी पुत्री।
रोशन आरा	...	शाहजहाँ की छोटी पुत्री।
नादिरा	...	दारा की पत्नी।
वीणा	...	प्रकाश की पोती।

गौण स्त्री-पात्र

सलीमा (नादिरा की दासी), राधा (मालिन), दासी, संदेश-वाहिका आदि।

इन्हें बेचकर धन पाते हैं।

फूल जगत् में क्यों आते हैं।

अभी एक ही माला बन पाई है और शाहज़ादियों—जहानारा और रोशनआरा—के आने का समय हो गया! प्रति संध्या दोनों को एक-एक माला भेंट करने का मेरा नित्य-कर्तव्य कदाचित आज न निभेगा। जहानारा! वह स्वर्ग की देवी है—सौम्य और सुंदर—गंगा की निर्मल धारा। वह हमें कितना प्यार करती है—मानो हमारी स्वामिनी नहीं सहोदरा है। विश्व के महानतम साम्राज्य के अधिपति शाहजहाँ की ज्येष्ठ-तम और श्रेष्ठतम पुत्री जहानारा! तुम्हें वैभव का अभि-मान छू भी नहीं गया। (कुछ ठहर कर) तो फिर क्या आज दूसरी माला नहीं बनेगी! रोशन आरा! आह! आह, वह कितनी सुंदर है, ज्वार-भाटे की भाँति उन्मत्त, बिजली की भाँति तेज, संगमरमर के ताजमहल की तरह उजली, यमुना की बाढ़ की भाँति वेगवती! उसमें आकर्षण है, जलन है, तेज है, वेग है और है ओज! वह निर्माण की कल्याणमयी मूर्ति नहीं, विध्वंस की तड़ित-रेखा है। उसके कोप से मैं आज न बच सकूंगी। क्या करूं। समझ में नहीं आता।

(माला गूंथने में लग जाती है और गाने लगती है ।
धीरे-धीरे जहानारा और रोशनआरा का प्रवेश ।
मालिन-बाला अपने काम में व्यस्त है, मानो
उसने देखा ही नहीं कि कोई आ रहा है ।)

जहानारा:—अरी राधा !

राधा:—(हड़बड़ा कर खड़ी होकर, कोर्निस करती है) हुक्म, सरकार।

जहानारा:—आज तो माला गूंथने में ऐसी मग्न है, मानो अपने दूल्हा के लिए वरमाला बना रही है।

राधा:—मेरा दूल्हा । आप मेरी दूल्हा हैं। (जहानारा के गले में हार डाल देती हैं। रोशनआरा की त्योरी कुछ चढ़ जाती हैं।

जहानारा:—लो राधा, तूने मुझे अपना कन्हैया बनाया है । तू सुन पाती है राधा, उस यमुना की नीली नीली लहरों में अब भी कृष्णा की बंसी बज रही है। वह आज भी 'राधा-राधा' चिल्ला रही है, राधा ! इस प्रेम के संगीत को मनुष्य अब भी समझ सके तो कैसा अच्छा हो ? (रोशनआरा की ओर देखकर) क्यों बहन, रोशनआरा, तुम इतनी उदास क्यों हो गई ?

राधा:—समझी शाहज़ादी साहिबा। मैं अभी माला लाती हूं।

(राधा का प्रस्थान। जहानारा अपने गले की माला रोशन-
आरा के गले में डालना चाहती है, लेकिन रोशन-
आरा रोक देती है।)

रोशन:—नहीं बहन जहानारा। तुम बड़ी हो, तिस पर दारा का तुम पर अनन्य स्नेह है। यह नौकरों का कर्तव्य है कि वे पहले दारा और जहानारा का आदर करें और बची—खुची.........।

जहानारा:—नहीं रोशन।

रोशन:—(बात काट कर) किंतु, यही तो उचित है। यही न्याय के अनुकूल है। मेरा दुःखी होना मेरे हृदय की दुर्बलता है-अपराध है। मुझे क्षमा करो।

जहानारा:—दुत पगली! ऐसा न कहो! मेरा और दारा का यह दुर्भाग्य है कि हम तुम से कुछ वर्ष पहले इस दुनिया में आगए हैं। आज संसार यदि हमारे सर पर आदर, शक्ति और वैभव का भार लाद रहा है, तो क्या इस कारण हमें भाई-बहनों का स्नेह खोना पड़ेगा।

[राधा माला लेकर आती है और रोशनआरा को भेंट
करती है। रोशनआरा माला को झटक कर तोड़
देती है। राधा अनमनी-सी चली जाती है।]

जहानाराः--रोशन, तुमने एक अबोध लड़की का दिल तोड़ दिया।

रोशनः--दिल तोड़ दिया। यह दुनिया 'दिलों' की इतनी परवा नहीं करती। इस मालिन की लड़की ने भी तो एक दिल को खुश करने के लिए कितने फूलों के कलेजों में सुई छेदी है।

जहानाराः--मुझे डर लगता है, रोशनआरा। तुम्हारा यह भाव देख कर मैं आशंका से काँप उठी हूँ। उधर देखो, उस किले के उस झरोखे में बैठे हुए बीमार अब्बा शाहजहाँ इस ताजमहल की ओर देखकर क्या सोच रहे हैं। देखो न, ताजमहल के भीतर मृत्यु-निद्रा की गोद में विश्राम करने वाली माँ मुमताजबेगम क्या कह रही हैं। स्वर्ग में बैठे हुए सम्राट बाबर, हुमायूं, अकबर और जहांगीर आज चिंता में पड़ गए हैं। ईर्ष्या वह आग है जो लोहे को भी भस्म कर देती है—वह भूकम्प है जो किलों को भी भूमिसात कर देता है। मुझे डर है हमारी पारस्परिक ईर्ष्या के कारण मुग़ल-साम्राज्य········।

रोशनः--मुग़ल-साम्राज्य! आशंका की वायु से काँप उठने वाले केले के पत्तों के स्तम्भों पर साम्राज्य का बोझ नहीं टिक सकता। उसके लिए दृढ़-निश्चयी, आशंकाहीन, सुदृढ़

चरित्रवाले व्यक्ति की आवश्यकता है, जहानारा। मुग़लवंश में ऐसे महाप्राण का अभाव नहीं है। मुग़ल साम्राज्य अडिग है, अजर है और अमर है।

जहानारा:—यदि हमारा स्नेह अडिग, अजर और अमर बना रहा। अच्छा अब चलें।

(दोनों का प्रस्थान)

पट-परिवर्तन

तीसरा दृश्य

[स्थान—औरंगाबाद में मुगल राजमहल। एक हाथ में तलवार और एक में कुरान शरीफ़ लिए हुए औरंगजे़ब आता है।]

औरंग:—नीरस और निर्मम औरङ्गजेब ! तू किसी को प्यार नहीं करता ! तलवार और कुरानशरीफ़, तेरे जीवन के दो ही आधार हैं। तलवार तेरी जीवन-सहचरी है और कुरान शरीफ़ तेरे प्राणों का प्रकाश। तलवार के ज़ोर से कुरान शरीफ़ को हिंदुस्तान के घर-घर में पहुँचा देना और कुरान शरीफ़ के नाम पर सारे मुसलमानों की तलवारें म्यानों से बाहर कराना, यही तो तेरे जीवन का स्वप्न है। दारा, शुजा

और मुराद ये मेरी शतरंज के मोहरे हैं। ये सब किसी न किसी नशे में ग़र्क हैं। दारा दीवाना है उपनिषदों के पीछे, मुराद को शराब और सुन्दरी ही सब कुछ है, शुजा बङ्गाल के सङ्गीत में जिन्दगी को डुबो चुका है। होश में अगर कोई है तो यह औरङ्गज़ेब !

(मोहम्मद का प्रवेश उसके हाथ में एक लिफ़ाफ़ा है)

मोहम्मद— अब्बा ! आगरा से शाही फ़रमान आया है !

औरंग:—लाओ बेटा ! (ख़त लेकर पढ़ता है। पढ़ने के बाद मोहम्मद को देता है।) तुम भी पढ़ो ! (मोहम्मद ख़त पढ़ता है।) पढ़ा मोहम्मद ! इसका मतलब है हम अपनी सारी मेहनत पर पानी फेर दें। बीजापुर से घेरा उठा लें। आह ! मुगल-साम्राज्य का दबदबा अब्बा की उदारता और अस्थिर-चित्तता के कारण कितना कम होगया है, यह वह नहीं सोचते। शाहजहाँ जो ठहरे ! कई बार पागलपन सवार हुआ कि ईरान पर हिंदुस्तान का झण्डा फहराया जावे। कई बार मुझे, दारा को राजा जयसिंह और राजा जसवन्त-सिंह को पहाड़ी दर्रों को पार कर जाना पड़ा, जान लड़ानी पड़ी; लेकिन अब्बा के इरादे पानी के बुलबुले हैं। हमें हमेशा ही काम अधूरा छोड़ कर वापस लौटना पड़ा

यही हाल हमारा दक्षिण में होता रहा है। मुग़लों की शक्ति पर लोग आज सन्देह करने लगे हैं, मोहम्मद !

मोहम्मद:—फिर क्या किया जाय ? बीजापुर तो अब समाप्त ही होने वाला है। वह अन्तिम साँसें ले रहा है।

औरंग:—वह समाप्त होने वाला है और वह समाप्त होगा। तुम घेरा जारी रखो !

मोहम्मद:—लेकिन शाही हुक्म।

औरंग:—वह नहीं माना जायगा। साम्राज्य के हित के लिए वह नहीं माना जायगा।

मोहम्मद:—लेकिन सम्राट शाहजहाँ आपके अब्बा, मेरे बाबा-उनका हुक्म······

औरंग:—मैं जानता हूँ मोहम्मद कि तुम बाप के हुक्म को आँखें मूंदकर मानना फ़र्ज़ समझते हो। तुम आश्चर्य करते हो कि तुम्हारा बाप अपने बाप का हुक्म क्यों नहीं मानता। लेकिन मोहम्मद तुम नहीं जानते इस आज्ञा-पत्र पर दारा के दस्तख़त हैं।

मोहम्मद:—लेकिन मोहर तो शाही है।

औरंग:—हो। मैं शाही हुक्म मानने को तैयार नहीं। मैं अब्बा का

हुक्म मान सकता हूँ, दारा का नहीं, हरगिज़ नहीं। घेरा न उठाया जावे।

मोहम्मद:—हमें आगरा से कोई सहायता न मिलेगी!

औरंग:—न मिले! औरङ्गज़ेब को इसकी कब चिन्ता है। छोटे से बीजापुर के लिये क्या सारे मुग़ल-साम्राज्य की शक्ति लगा देने की ज़रूरत है। (कुरान शरीफ़ दिखाकर) इसकी ताक़त जानते हो! कुरान शरीफ़ के नाम पर मैं जंगल में भी सेना जमा कर सकता हूँ, नए साम्राज्य स्थापित कर सकता हूँ। यह केवल धर्म-ग्रन्थ ही नहीं राजनीतिक अस्त्र भी है।

(एक संदेश-वाहिका का प्रवेश)

संदेश:-(कोर्निश करके) शाहज़ादी रोशनआरा ने यह पत्र भेजा है।

(पत्र औरंगज़ेब को देती है। औरंगज़ेब पत्र निकाल कर मन ही मन पढ़ता है।)

मोहम्मद:—आगरा से यहां तक तुम अकेली ही आई हो। गज़ब की हिम्मत है तुममें।

औरंग:—मोहम्मद! बीजापुर का घेरा उठा दो! जाओ!

मोहम्मद:—अभी तो आप……

औरंग:— तुम आश्चर्य करते हो ! अरे यही तो राजनीति है, मोहम्मद ! पल भर पीछे क्या होगा यह किसे मालूम ! परिस्थिति के अनुसार हमें निश्चय बदलना पड़ता है।

मोहम्मद:—राजनीति तो मैं नहीं समझता, आपका हुक्म ही मेरे लिए सब कुछ है। मोहम्मद के पास दिमाग़ नाम की चीज़ तो मानो है ही नहीं। वह मानो एक मशीन है, जिसे चलाने वाले आप हैं।

(प्रस्थान)

औरंग:—अब्बा बहुत बीमार हैं ?

सन्देश:—हाँ शाहज़ादा साहब ! सल्तनत की बागडोर शाहज़ादा दारा के हाथ में है। राजपूत राजा जयसिंह, जसवन्तसिंह और छत्रसाल हाड़ा वग़ैरः सब दारा के साथ हैं। शाहज़ादी रोशनआरा साहिबा ने कहा है कि अगर मुग़ल-साम्राज्य को हिंदुओं के हाथ में जाने से रोकना चाहें तो आपका इस वक्त आगरा पहुँचना ज़रूरी है ।

औरंग:—तुम आज ही, अभी वापस लौट जाओ । मुझे पहुँचने में देर लगेगी। रोशनआरा से कहना, मैं मुराद को भी साथ लेकर आता हूँ। मेरे आने से पहले वह भी कुछ काम करें।

वह जितने मुग़ल और दूसरे मुसलमान सरदारों को दारा के ख़िलाफ़ उभाड़ सके उभाड़े !

सन्देश:—बहुत अच्छा। (सलाम करके प्रस्थान)

औरंग:—संसार के सब प्राणियों के स्नेह से वंचित, औरंगज़ेब ! तुझे बहन रोशनआरा के अतिरिक्त कोई और भी प्यार करता है ? नहीं। रोशनआरा का स्नेह मेरे मरुभूमि से जलते हुए जलहीन जीवन का एक मात्र सरोवर है। वह क़यामत से भी ज़्यादा तेज़ लड़की, वह तलवार से भी ज़्यादा तीखी धार वाली लड़की वह बिजली से भी अधिक ज्योतित आँखों वाली लड़की, आज औरंगज़ेब को सर्वनाश की आग लगाने को कह रही है। मैं मन्त्र-मुग्ध साँप की तरह उस सपेरिन के इशारे पर नाचूंगा। जो वह कहेगी वही करूंगा। दारा—बादशाह का सबसे बड़ा पुत्र दारा—आज वह बादशाह है और औरङ्ग़ज़ेब मामूली सूबेदार। यह अन्याय है। अब्बा ने औरङ्ग़ज़ेब के लिए हमेशा रणभूमि और दारा के लिए विश्राम-भवन को चुना है—उन्होंने औरङ्ग़ज़ेब को सदा ही अपनी स्नेह-छाया से निर्वासित कर रखा है और उनके जीवन की अंतिम घड़ियों में उनका यह अन्याय सीमा से बढ़ गया है। अच्छा शाहजहाँ, तुमने रणभूमि में भेज भेज कर औरङ्ग-

ज़ेब को काफ़ी कठोर और मज़बूत बना दिया है। जीवन के अन्तिम दिनों में तुम अपने विद्रोही पुत्र की शक्ति देखते जाओ! दारा बादशाह होगा—वह काफ़िर! कुरान शरीफ़! अब तुम्हारी आवश्यकता आगई है—तुम मेरी तलवार की ताक़त हो—तुम मेरी तलवार हो। तुम मेरी किस्मत हो, तुम मेरा इतिहास हो!

(प्रस्थान)

पट-परिवर्तन।

चौथा दृश्य

[स्थानः—ताजमहल का सामने वाला चबूतरा। प्रकाश ताजमहल की ओर मुँह किये बैठा है। आँखों से आँसू बह रहे हैं। उसकी १३-१४ साल की पोती जिसका नाम वीणा है फव्वारे के पास बैठी हुई गा रही है। समय-रात्रि। पूर्णिमा की चाँदनी छिटक रही है।]

दारा:—चाँदनी रात की इस उज्ज्वल आभा में ताजमहल कैसा चमक रहा है। विश्व के चिरन्तन प्रेम का एक अमर और सुन्दरतम अश्रु है यह। अच्छा! विश्व के इतिहास में तुम 'प्रेम के पैग़ंबर' के रूप में सदा जीवित रहोगे। ताजमहल के रूप में तुम्हारी अन्तर्वेदना सदा देदीप्यमान रहेगी।

वीणा:—(तान छेड़ती है)

हमारे भी दिल होता है।

दारा:—नीरव रात्रि में यह करुण स्वर हृदय में तीर की तरह चुभ रहा है। कितना अवसाद है इस अबोध संगीत में? (प्रकाश की तरफ़ देख कर) और यह कौन भला आदमी मूर्ति की भाँति अचल बैठा है। जैसे किसी ने वेदना की प्रतिमा तैयार की हो। (पास जाकर) तुम रो रहे हो वृद्ध पुरुष। रोने के लिए तुम्हें भी यही स्थान मिला है।

प्रकाश:—ताजमहल मेरे जीवन का तीर्थ-स्थान है। यहाँ आकर मेरे प्राणों का संयम वह पड़ता है। जी चाहता है इस निष्ठुरता की प्रतिमूर्ति ताजमहल को आँसुओं की बाढ़ में वहा दूं।

दारा:—निष्ठुरता की प्रतिमूर्ति ताजमहल! यह तुम क्या कहते हो। संसार की कोमलतम भावना का यह उज्ज्वलतम

स्मारक तुम्हारे लिए निष्ठुरता की प्रतिमूर्ति है। ताजमहल तुम्हारा तीर्थ-स्थान है और आँसुओं की बाढ़ में तुम उसे बहा देना चाहते हो। कैसी विचित्र बातें कर रहे हो तुम! ताजमहल से तुम्हारा क्या सम्बन्ध है?

प्रकाश:—ताजमहल से मेरा क्या सम्बन्ध है? हः हः हः! अरे भाई, ग़रीबों का किसी से क्या सम्बन्ध है, इसे जानने को कोई क्यों लालायित हो? अमीरों का निर्दय वैभव-रथ हम निर्धनों की आकांक्षाओं को चकनाचूर करता हुआ धड़-धड़ाता चलता ही रहता है, ओ युवक! तुम इस पचड़े में क्यों पड़ते हो? (आँखों में आँसू छलछला आते हैं।)

दारा:—रोते क्यों हो, वृद्ध पुरुष! मैं जानता हूँ तुम बहुत दुखी हो!

प्रकाश:—तुम पहले आदमी हो, युवक, जिसने मुझे दुखी कहा है। धनवान अपना दुख ताजमहल की भाँति संसार की आँखों में अङ्कित कर जाते हैं—कवि अपनी वेदना काव्यों में लिख जाते हैं। किंतु हम निर्धन मज़दूर—जिनके पास न धन है, न विद्या—शून्य से ही आत्म-निवेदन करते हैं। हमारी सहानुभूति में किसकी आँखों में आँसू आवेंगे? ग़रीब तो वह रेगिस्तान हैं जहाँ प्रकृति के बादल भी नहीं आते, आते हैं तो बरसते नहीं, जो दो-चार बूंदे पाकर भी धन्य हो जाते हैं।

दारा:—किसी की आँखों में तो आवेंगे, बाबा। ऐसे दिल भी दुनिया में हैं। वसुधा को जितना समझा जाता है, वास्तव में वह उतनी कठोर नहीं है। पृथ्वी के अन्तस्तल में आग भी है पानी भी। घन बिजली भी गिराते हैं तो जल भी बरसाते हैं। तुमने यह तो बताया ही नहीं कि ताज-महल से तुम्हारा क्या सम्बन्ध है? मैं इसलिए पूछता हूँ कि मेरा भी इससे कुछ सम्बन्ध है?

प्रकाश:—तुम कौन हो, युवक?

दारा:—जिसकी स्मृति में सम्राट शाहजहाँ ने यह ताजमहल बनवाया है उस मुमताज बेगम का सबसे बड़ा पुत्र।

प्रकाश:—(आश्चर्य चकित होकर) युवराज दारा! मेरा भी एक बेटा था युवराज, ठीक तुम्हारी ही उम्र का। इसी ताजमहल के बनाने में उसकी जान चली गई। उधर देखो। जब वह बड़ी गुम्बज बन रही थी, तब एक बड़ा भारी पत्थर आकर उसके सर पर गिरा और वह सदा के लिए सो गया।

दारा—बड़े दुःख की बात है, बाबा! फिर भी धैर्य रखना मनुष्य का धर्म है।

प्रकाश:—धैर्य! हाँ युवराज, धैर्य रखना ही पड़ता है। यह जीवन का बोझा ढोना ही पड़ता है। आप वैभव-सम्पन्न व्यक्ति ताज-

महल बनाकर संसार से कहते हैं, हम बड़े दुखी हैं, किंतु हम मजदूर अपने दुख को—आत्म-वेदना को हृदय के क़ब्रिस्तान में दफ़नाए रखते हैं। हम दूसरों के सुख-दुख की तस्वीरें बनाने में जीवन बिता देते हैं। संसार वैभवशालियों के दुख को देखता है। अभाग्य के शिकार, अभागे लोगों के दुखों को कौन जानता है ?

वीणा:—(सहसा बीच में ही तान छेड़ती है।)

हमारे भी दिल होता है।

दारा—तुम सच कहते हो बाबा !/आज सामाजिक व्यवस्था बड़ी त्रुटि-पूर्ण हो गई है। मनुष्य-मनुष्य के बीच भेद-भाव की दीवारें खड़ी हो गई हैं। हम एक-दूसरे के दुख में भाग लेने के मानव-धर्म को भूल गए हैं। स्नेह और सहानुभूति के उच्चतम मानवीय गुण आज मूर्खता के लक्षण समझे जाते हैं। जिनके पास शक्ति और धन है उनके हृदय से मानों मनुष्यता नष्ट हो गई है। वे अपनी वासना के बन्दी बन गये हैं। /

प्रकाश:—मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूं। भारत के भावी सम्राट के मुँह से मैं यह क्या सुन रहा हूँ ?

दारा—मेरे मुँह से ये बातें असङ्गत जान पड़ती है, किंतु, सुनो

प्रत्येक हृदय में घर कर चुके हैं। यह सब कैसे दूर होगा। आज हमारे ही घर में गृह-युद्ध की भयानक तैयारियाँ हो रही हैं। अब्बा की बीमारी का समाचार पाकर शुजा बङ्गाल से सेना लेकर चल पड़ा है। औरङ्ग़ज़ेब और मुराद मिलकर दक्षिण से आ रहे हैं। क्या इस भयानक हिंसा को रोका न जा सकेगा। यदि मैं रङ्गमञ्च से हट जाऊँ तो भी ये तीनों परस्पर लड़ेंगे। इसके बाद जो भी रहेगा साम्राज्य का रथ आगे हाँकेगा, जिसके नीचे कितने ही बेकसों के हृदय चकनाचूर होंगे। नहीं मैं ऐसा न होने दूंगा। मुझे समाज की व्यवस्था बदलने के लिये शक्ति चाहिये। वही शक्ति हस्तगत करने के लिए मुझे भाइयों से लड़ना ही पड़ेगा।

(प्रस्थान)

पट—परिवर्तन

———

पाँचवाँ दृश्य

[स्थानः—आगरा का राज महल। रोशनआरा का कमरा। कमरा खूब सजा हुआ है। एक तिपाही पर सुराही और प्याला रखा है। रोशनआरा हाथ में नंगी तलवार लिए घूम रही है।]

रोशन:--　　(गान)

मैं हूं महाप्रलय की ज्वाला ।

चाहा जग ने मुझे दबाना,
चाहा मुझको राख बनाना,
चाहा पैरों से ठुकराना,
उसने मुझे नहीं पहचाना ।
मैंने पी प्रतिहिंसा हाला ।
मैं हूं महाप्रलय की ज्वाला ।

चिन्ता क्या गिरि पथ में आवें,
वैरी सर पर वज्र गिरावें,
मेरी अभिलाषा की लपटें,
अब जग का अभिमान जलावें ।
मेरा हृदय हुआ मतवाला ।
मैं हूं महाप्रलय की ज्वाला ।

सुन्दर सोने का जग प्यारा,
उसको मैं मरघट-सा कर दूं ।

आज जगत के अणु-अणु में मैं
सर्वनाश का स्वर स्वर भर दूं ।
मुझको कौन रोकने वाला ।
मैं हूं महाप्रलय की ज्वाला ।

ईर्ष्या की आँधी में उड़कर मैं कहाँ आ गई हूँ । मैं नारी हूं । नारी का अस्तित्व प्रेम करने के लिए है, संसार को स्नेह के निर्मल झरने में स्नान कराने के लिए है। मैं अपना स्वाभाविक धर्म छोड़कर हिंसा का भयानक खेल खेलने चली हूं । कोई दिल में बार-बार कहता है, "रोशनआरा, ज़रा दिल में सोच । आगे कदम बढ़ाने के पहले उसके परिणामों पर विचार कर ।" लेकिन हृदय में प्रतिहिंसा जो कोहराम मचा रही है, उसके आगे यह धीमी आवाज़ 'नक्कारख़ाने में तूती' के समान सुनाई नहीं देती । दारा और जहानारा सम्राट के सम्पूर्ण स्नेह, जनता की सम्पूर्ण भक्ति और शासन के सम्पूर्ण अधिकार के स्वामी क्यों हों और रोशनआरा को राजभवन के साधारण मज़दूरों से भी अपमानित क्यों होना पड़े ? धिक्कार है ऐसे जीवनको ! मैं वह घास का तिनका नहीं हूँ जिसे चाहे कोई भी कुचल जावे और जो प्रतिवाद-स्वरूप अपना सर भी न उठावे ।

मैं वह काँटा भी नहीं जो थोड़ा-सा खून पीकर सन्तुष्ट हो जावे। मैं वह छोटी सी चिनगारी हूं जो समय पाकर महा-प्रलय की ज्वाला बन जाती है। भाई औरंगज़ेब! हाँ, वही मेरे स्वप्नों का एक मात्र सहारा है। केवल उसीने अपने हृदय का सम्पूर्ण स्नेह मुझ पर न्योछावर किया है। हम दोनों ही सदा से 'घर भी और बाहर भी' स्नेह और विश्वास से वंचित रहे हैं, इसी लिए तो आज हमारे घायल हृदय एक दूसरे के इतने निकट हो गए हैं कि पाप और पुण्य दोनों में हमारे कदम साथ-साथ उठेंगे। वह भयंकर आँधी बनकर बाहर से आ रहा है और मैं भीषण ज्वाला बनकर अन्तःपुर से बाहर की ओर बढ़ रही हूं। आज इस आँधी और आग में मुग़ल-साम्राज्य के वर्तमान अभिमानी अधिकारी शाहजहाँ, दारा, जहानारा और छात्रसाल हाड़ा आदि जलकर भस्म हो जावेंगे।

(एक दासी का प्रवेश)

दासी:—(कोर्निश करके) सरदार कासिम खाँ आए हैं!

रोशन:—उन्हें अन्दर भेज दो।

(दासी का प्रस्थान)

मूर्ख दारा। तुम हिन्दुस्तान के साम्राट बनोगे। औरंगज़ेब और मुराद को रोकने के लिए, तुम महाराजा जसवंतसिंह

को भेज रहे हो। वह अभिमानी राजपूत! एक बार इच्छा तो हुई थी कि उसे भी आँखों की शराब पिला कर पथ से विचलित कर दूं, किन्तु साहस नहीं हुआ। उसे पथ-विचलित चाहे न कर पाऊँ, विफल तो कर ही सकूंगी। सरदार कासिम खाँ भी उसके साथ जा रहा है। मुझे विश्वास है कि मैं उसे अपनी ओर मिला सकूंगी। थोड़े से राजपूतों को छोड़कर ऐसा कौन है जो रोशनआरा के हाथ से प्याला लेने में अपना सौभाग्य न समझे।

(कासिम खाँ का प्रवेश।)

कासिम:—आदाब शाहज़ादी, साहिबा! आज मेरी किस्मत का सितारा—

रोशन:—इसलिए चमका कि मुझे आपकी ज़रूरत पड़ गई। आप तो इस कमरे में आते ही शायर बन गए। मैं तो समझती थी यह बीमारी सिर्फ़ जहानारा में है। बैठिए खाँ साहब। (हाथ पकड़ कर बैठाती है।) मैं ने आपको एक खास काम के लिए बुलाया है।

कासिम:—बंदा हाज़िर है। बंदे की जान भी हाज़िर है।

रोशन:—जान की मुझे ज़रूरत नहीं है। आप नहीं जानते कासिम खाँ कि मुझे आपका कितना खयाल है। मैं आप का अपमान नहीं सह सकी!

कासिम:—मेरा अपमान! किसने मेरा.........

रोशन:—ह: ह: ह: अपना अपमान देखने की आँखें भी आपके पास नहीं है, भोले सरदार। आप नहीं जानते कि शाहजहाँ और दारा ने औरंगज़ेब और मुराद के ख़िलाफ़ जो फ़ौज भेजी है उसके सेनापति के पद पर सरदार कासिम खां को न रख कर जसवंतसिंह को क्यों रखा गया है!

कासिम:—हूं!

रोशन:—हूं क्या? सम्राट और दारा को मुसलमानों का ज़रा भी विश्वास नहीं। जयसिंह, जसवंतसिंह और छत्रसाल हाड़ा आदि को ही सारे काम सौंपे जाते हैं। क्या कासिमखाँ के हाथों में ताक़त नहीं है?

कासिम:—यह मैंने पहले नहीं सोचा था।

रोशन:—तो अब सोचने का वक्त आ गया है और अगर इस वक्त न सोचेंगे तो फिर सोचने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी।

(उठकर शराब का प्याला भरने लगती है)

कासिम:—जैसे मैं आज तक सो रहा था। हम जो पीढ़ियों से मुग़ल-साम्राज्य के लिए ख़ून बहाते आए हैं, आज पराए बन गए और हिंदू जो कल तक मुग़लों की जड़ खोदते थे इतने विश्वास-पात्र बन गए!

रोशन:--(मुसकराकर शराब का प्याला बढ़ाती है।) लीजिए, सरदार। इसकी मदद से आप ठीक सोच सकेंगे !

कासिम:—(प्याला लेकर पीता है।) हूं !

रोशन:--आपकी समझ में आया कि आपका अपमान किया गया है।

कासिम:--अच्छी तरह। मैं सम्राट का हुक्म नहीं मानूंगा !

रोशन:--यानी !

कासिम:—मैं जसवंत सिंह के साथ नहीं जाऊंगा।

रोशन:—इससे मुझे क्या लाभ होगा और आपके अपमान का भी क्या प्रतिकार होगा ?

कासिम:—फिर आप क्या चाहती हैं ?

रोशन:—जसवंतसिंह के साथ जाना होगा !

कासिम:—अपमान का घूंट पीकर !

रोशन:—बदला लेने के लिए !

कासिम:—किससे ? जसवंत सिंह से !

रोशन:—जितनी शक्ति शरीर में है उतनी ही बुद्धि आपके मस्तिष्क में होती तो क्या बात थी ? जसवंतसिंह से कैसा

बदला ! बदला लेना है – जहानारा से, दारा से ! इन्होंने तो हम मुग़लों को हिन्दुओं का दास बना कर रखा है। अपने वास्तविक शत्रु को न भूलो, सरदार ! जड़ पर चोट करने से डालियाँ और पत्ते तो आप ही नष्ट हो जावेंगे।

कासिम:—तो मैं जसवन्तसिंह के साथ जाकर क्या करूंगा। मैं यहीं रह कर विद्रोह का झंडा खड़ा किए देता हूं। दारा की जगह आपको तख्त पर.........।

रोशन:—मुझे तख्त का मोह नहीं है और मुझे तख्त पर बैठाना इतना आसान नहीं है। मैं कहूं वैसा करिए। आप जसवन्तसिंह के साथ जाइए। उसे यह मालूम न हो कि आप उसके विरुद्ध हैं। ठीक लड़ाई के वक्त आप औरंगज़ेब से मिल जाइए।

कासिम:—धोखा।

रोशन:—धोखा ! ह: ह: हा ! यह राजनीति का धर्म है धोखा नहीं। अपना लक्ष्य शुभ होना चाहिए। साधन चाहे जैसा हो। चलो ज़रा बाग़ की सैर कर आवें।

(हाथ पकड़ कर ले जाती है।)

पट-परिवर्तन।

दृश्य छठा

[स्थानः--आगरा का दीवानेखास । तख्तेताऊस पर शाहजहाँ बैठा है । दाहिनी ओर बैठा हुआ दारा शाहजहाँ को सहारा दिए हुए हैं । उसके बाद छत्रसाल हाड़ा तथा अन्य राजपूत राजा और सरदार बैठे हैं । बाईं ओर दिलेरखाँ, रुस्तमेजंग, खलीलुल्लाहखाँ आदि मुसलमान सरदार बैठे हुए हैं]

खलीलुल्लाहः—शाहंशाह !

शाहः—बोलो, खलीलुल्लाहखाँ, रुक क्यों गए ?

खलीलुः--रुक इसीलिये गया कि मेरी बात आपको अच्छी नहीं लगेगी ।

शाहः--मुग़ल-शासन में अपने विचार प्रकट करने का अधिकार सब को है । आप तो साम्राज्य के स्तंभ…

खलीलुः--साम्राज्य के स्तंभ ! नहीं सम्राट, इन स्तंभों की सम्राट को अब आवश्यकता नहीं रही ! आवश्यकता थी बादशाह बाबर को जिनके साथ हमारे बुजुर्ग मध्य एशिया से लेकर हिन्दुस्तान तक मारे-मारे घूमे थे, जब कि घोड़ों की पीठ ही हमारे और आपके पूर्वजों की समान रूप से सुख-सेज़ थी । अब वक्त बदल गया है । आज सहस्त्रों मंगोल, तूरानी,

ईरानी, अफ़गानों और अरबों के खून से मुग़ल-साम्राज्य को नींव सींची जाकर सुदृढ़ हो गई है। अब साम्राज्य को हमारी क्या ज़रूरत है ?

शाह:—यह तुम क्या कहते हो, खलीलुल्लाहखाँ, !

खलीलु:—मैं सच कहता हूँ, जहाँपनाह ! कौन कहता है कि आज मुग़ल हिन्दुस्तान के शासक हैं। आज हम हिन्दुओं के आश्रित जी रहे हैं-उनके हाथ की कठपुतली बने हुए हैं। आज हम अपनी वह ताक़त भूल गए जिससे मध्य एशिया से लेकर यूरोप के अन्तिम छोर तक मुस्लिम तलवार की धाक जम गई थी। आज हर बात में हम हिंदुओं का मुँह ताकते हैं। हम पराधीन हैं।

शाहजहाँ:—पराधीन ! प्रेम से मनुष्य को जीत लेना क्या पराधीनता है। तलवार से सम्राज्य जीते जाते हैं, लेकिन प्रेम से स्थिर रखे जाते हैं। हिन्दुस्तान के बादशाह को न हिन्दू बन कर रहना होगा न मुसलमान। उसे केवल मनुष्य बन कर रहना होगा। आप क्या कहते हैं, दिलेरखाँ !

दिलेरखां:—आप ठीक कहते हैं शाहंशाह ! महाप्राण अकबर ने हिन्दुओं और मुसलमानों की एक सम्मिलित शक्ति से सारे संसार में हिन्दुस्तान की विजय-पताका फहराने का जो

स्वप्न देखा था वह कुछ अबोध मुसलमान सरदारों के संकुचित विचारों के कारण नष्ट हुआ जा रहा है।

दारा--और मुझे इस बात का खेद है कि यह विष का बीज औरंगज़ेब द्वारा मुसलमान सरदारों के दिलों में बोया गया है। जिस दिन पहली बार उसने बुन्देलखंड के कुछ मंदिरों को तुड़वाया था मुझे तो उसी दिन जान पड़ा था कि कोई मुग़ल-सम्राज्य की नींव के पत्थर उखाड़ रहा है।

खलील:--ऐसा क्यों !

दारा:--ऐसा क्यों ? हिन्दू भोले हैं जो आज भी मुग़ल-साम्राज्य के लिये वे जान देने को प्रस्तुत हैं। दूर क्यों जाते हो मेरे पास बैठे हुए रण-केशरी वीरवर छत्रसाल हाड़ा को ही देखिए। इन्होंने किस लिये हमारे लिये ५२ युद्धों में सफलतापूर्वक तलवार चलाई। इसमें इनका क्या स्वार्थ था ? जो हिन्दू मुग़लों की ओर से अफ़गानिस्तान और ईरान में विजय पा सकते हैं, वे यदि संगठित हो सकें तो क्या मुग़ल सम्राज्य का अस्तित्व खतरे में नहीं डाल सकते। यहाँ पर तो हिन्दुओं और मुसलमानों को एक होकर ही रहना उचित है !

शाहजहाँ:--तुम ठीक कहते हो, दारा। गुण किस जाति में

नहीं हैं, फिर हिन्दुओं की संस्कृति तो संसार की सब से प्राचीन संस्कृति है। इस सुसंस्कृत देश पर हम मुसलमान बन कर राज्य नहीं कर सकते।

दिलेरखाँ:—और उनकी संस्कृति न केवल पुरानी है बल्कि सबसे श्रेष्ठ भी। भरत और राम का प्रेम हम लोगों में कहाँ है ? सम्राट की बीमारी का समाचार पाते ही शुजा बंगाल से, औरंगज़ेब और मुराद दक्षिण से विद्रोह का झण्डा खड़ा कर चल पड़े!

शाह:- यह सब क्या हो रहा है! कुछ भी समझ में नहीं आता। चारों ही लड़के मेरे कलेजे के टुकड़े हैं—मेरे जीवन का प्रकाश हैं। मैं किसका मंगल और किसका अमंगल चाहूँ। मैंने महाराजा जसवंतसिंह को औरंगज़ेब और मुराद को और महाराजा जयसिंह को शुजा को समझा-बुझा कर शांत करने के लिए भेज दिया है।

दारा: लेकिन क्या वे समझाने से समझेंगे ? उन्होंने आपकी आज्ञा का अपमान किया है। उन्हें दण्ड……

शाह:—दारा! वे तुम्हारे भाई हैं। उन्हें दंड देने की बात तुम्हारे दिमाग में कैसे आती है ? जिसकी स्मृति में मैंने ताजमहल खड़ा किया है, बेटा, तुम चारों उसी की प्रतिच्छाया हो। मेरे लिए तुम सब बराबर हो।

छत्रसाल:—लेकिन, दारा युवराज हैं। आपके सबसे बड़े पुत्र हैं—सबसे अधिक योग्य हैं। शाहज़ादा औरंगज़ेब ने स्वार्थ के लिए हिंदू मुसलमानों का प्रश्न खड़ा किया है। वह युवराज दारा को काफ़िर कहकर इन्हें इनके उचित अधिकार से वंचित करना चाहते हैं। उनका अपराध साधारण नहीं है। जिसके हाथ में राज-दंड है उसे पुत्र को भी क्षमा करने का अधिकार नहीं। उसका न्याय-दंड स्वजन और परजन दोनों पर समान प्रहार करता है।

शाह:—तो छत्रसाल जी आप इस भाई-भाई के युद्ध को प्रज्ज्वलित करना चाहते हैं?

खलील:—ऐसा होने से हिंदुओं के पौ बारह जो होते हैं। मुग़ल-शक्ति गृह-युद्ध से निर्बल हो जाय, यही तो ये चाहते हैं।

छत्रसाल:—सावधान, खलीलुल्लाहखाँ साहब! राजपूत धोखा नहीं देता, षड्यंत्र नहीं रचता और बेईमानी नहीं करता। वह जो ठीक समझता है कहता है, जो उचित जानता है करता है। आज तक हमने मुग़ल राजवंश को अपने से भिन्न नहीं माना—अपना मान कर, अपना रक्त पिलाकर उसके गौरव को बढ़ाया है। उसे नष्ट कर हिंदू राज्य स्थापित करने की अभी आवश्यकता नहीं जान पड़ी। जब तक

सिंहासन पर सम्राट शाहजहाँ और दारा जैसे व्यक्ति आसीन रहेंगे तब तक ऐसी आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

शाह:—शांत हाड़ा जी, आपका उपकार मुग़ल-राजवंश कभी न भूलेगा। लेकिन वर्तमान संकट का इलाज......

छत्रसाल:—इलाज! सम्राट, राजपूत के पास सब रोगों की औषधि है, उसकी तलवार! जो न्याय का अपमान करता है, चाहे वह बाप हो, चाहे बेटा, उसे इसका वार सहना ही पड़ेगा।

खलीलु:—किसी एक व्यक्ति के मानापमान के लिए सारे मुग़ल-साम्राज्य को रक्त में रँगने की मैं जरूरत नहीं समझता। मेरी राय में, आप औरंगज़ेब को आने दीजिए। क्या बाप का प्यार उनके दिल से सिंहासन की भूख को नहीं मिटा सकेगा।

शाह:—यही तो मैं सोचता हूं। दारा तुम उन्हें आने दो। वे अपने बूढ़े और बीमार बाप के आँसुओं की उपेक्षा न कर सकेंगे। मैं अपने हाथ से अपना राजमुकुट उतार कर उनके चरणों पर रख दूंगा और फिर तुम्हारे लिए माँग लूंगा। क्या वे, अपने बाप को यह भीख न देंगे? बोलो, दारा, तुम क्या कहते हो?

दारा—अच्छा, क्या आपने मुझे इतना लालची समझा है कि तुच्छ राजमुकुट के लिए भाइयों पर तलवार उठाऊं। मैं क्या कहूं, अब्बा! मैं इन झगड़ों से दूर रहना चाहता हूँ। मुझे उपनिषदों के अध्ययन में जो आनन्द मिलता है वह इन राजकीय झंझटों में कहाँ है! लेकिन जब मैं यह सोचता हूं कि औरंगज़ेब धर्म के नाम पर मनुष्यता का अपमान कर रहा है तो मुझे बहुत दुख होता है। मैं यह भूल जाता हूँ कि वह मेरा भाई है। मनुष्य जाति के शत्रु को दंड न देना देश और मनुष्यता के प्रति विश्वास-घात है। फिर भी आपने जितना मुझे प्यार किया है उसके बदले में आप जो कहेंगे वही मैं करूंगा।

(हाथ से तलवार और सर से राज-चिह्न उतार कर शाहजहाँ के पैरों पर रख देता है।)

लो अब्बा यह तलवार और यह राज-चिह्न। यदि मुराद और औरंगज़ेब इन्हें पाकर संतुष्ट हो जावें तो हज़ारों आदमियों का खून कराने की आवश्यकता नहीं!

दरबारी:—युवराज दारा की जय!

(सहसा जहानारा का प्रवेश)

जहा:—जय नहीं यह पराजय है। एक महान् सिद्धांत की क्षणिक मोह और भावुकता की बलिवेदी पर हत्या है। आप लोग नहीं जानते कि औरंगज़ेब की आँख दारा के युवराज-पद पर नहीं सम्राट के राजमुकुट पर है, क्या इसे हम वर्दास्त कर सकेंगे। हिंदुस्तान के हिंदुओं और मुसलमानों के सम्मिलित विश्वास ने शाहजहाँ को अपना सम्राट और दारा को युवराज माना है, किसी की शक्ति नहीं जो सम्राट के सर से राजमुकुट छीने—किसी को यह अधिकार नहीं। दारा, तुम भी वह गए अब्बा के कमज़ोर दिल के आवेश में। सम्राट अकबर का वह स्वप्न कि हिंदुस्तान की शक्ति संसार में अप्रतिम हो क्या कभी सच्चा न होगा। वह होगा तभी जब कि हिंदू और मुसलमान मिलकर एक जान होंगे। यह काम दारा ही कर सकेगा। औरंगज़ेब तो राष्ट्र के टुकड़े कर देगा! बोलो, दरबारियो क्या इसे आप पसंद करेंगे?

कई आवाजें:—नहीं, कभी नहीं?

जहा:—तो अब्बा, पहना दो दारा के सर पर यह राजचिह्न, दे दो उसे उसकी तलवार। आज्ञा दो कि जो व्यक्ति हिंदुस्तान के टुकड़े करना चाहता है, उसको यह दंड दे सके!

दुख आवें दुखको झेलेंगे,
सुख आवें, सुख में खेलेंगे,
फूल शूल दोनों ले लेंगे,
अमृत भरा हो या विष डाला !
साकी भर भर कर दे प्याला ।

(सहसा गान बन्द हो जाता है ।)

औरंग: - मुराद के डेरे में नृत्य, गान और शराब का दौर चल रहा है । जीवन को उसने कितना सरल बना लिया है । रणभूमि में भी नृत्य और गान ! जिस हाथ से एक क्षण पहले शराब का प्याला उठाया है उसीसे दूसरे क्षण तलवार भी पकड़ेगा । तोपें आग उगलती हैं, गोलियों और तीरों की वर्षा होती है, तब मुराद शत्रु-सेना पर बाज की तरह टूट पड़ता है । लोग आश्चर्य करते हैं कि कुरान शरीफ़ के विरुद्ध आचरण करने वाले व्यक्ति को मैं हिन्दुस्तान का बादशाह क्यों बनाना चाहता हूं । मुराद बादशाह बनेगा ! कितना सुन्दर स्वप्न है ? मैं ने भी पी है महत्वाकांक्षा की ज़हरीली शराब !

(एक मुग़ल सैनिक का प्रवेश)

सैनिक:— (कोर्निश करके) एक राजपूत सैनिक आपसे मिलना चाहता है।

औरंग:— उसे भेज दो।

(सैनिक का कोर्निश करके प्रस्थान)

शायद जसवन्तसिंह ने कोई सन्देश भेजा है। यह राजपूत जाति कितनी बहादुर है, लेकिन यदि इनमें बुद्धि होती तो संसार पर राज्य करती। ये लोग दूसरों के लिए जान दे सकते हैं-अपनों के लिए नहीं। दूसरों की अधीनता स्वीकार कर सकते हैं अपनों की नहीं। इनका आत्माभिमान ही इनके गले की फाँसी है। महाराज जयसिंह शुजा से युद्ध करने बंगाल की तरफ़ गए हैं, महाराज जसवंतसिंह मुझ से लोहा लेने आए हैं। छत्रसाल हाड़ा जसवंतसिंह के साथ इसलिए नहीं आए कि दोनों में से कोई भी किसी एक के अधीन नहीं रह सकता था। इनकी इस शानदार कमज़ोरी का लाभ विदेशी पूरा पूरा उठाते हैं। इन राजपूतों की सम्मिलित शक्ति से मुझे कभी सामना न करना पड़ेगा। मुझे विश्वास है कि इनके प्रथक-प्रथक उद्योगों को मैं विफल कर दूंगा।

(राजपूत सैनिक का प्रवेश तथा अभिवादन करना)

कासिम:—अर्थात्

सेनाध्यक्ष:—अर्थात् महाराजा जसवन्तसिंह के शिविर से। कल के युद्ध के विषय में परामर्श करने के लिए सभी प्रमुख सेनाध्यक्ष जमा हुये थे।

कासिम:—तो वहाँ क्या निश्चय हुआ?

सेनाध्यक्ष:—यही कि पहले ब्राह्म-मुहूर्त में—सुबह चार बजे क्षिप्रा में स्नान किया जाय और फिर रक्त-गङ्गा में इस कुम्भ-क्षेत्र को कुरुक्षेत्र बनाया जाय।

कासिम:—जो दूत औरंगजेब के पास संधि-चर्चा करने गया था उसे क्या उत्तर मिला।

सेनाध्यक्ष—वही जो कृष्ण को कौरवों से मिला था। संधि नहीं होगी। कल रण-चण्डी चेतेगी! हम तो चाहते थे।

कासिम:—क्या चाहते थे?

सेनाध्यक्ष:—यही कि आज रात को ही औरंगजेब की सेना को आगरा के पेठे और दिल्ली के लड्डू खिलाए जाते।

कासिम:—तुम हँसी करते हो। मुझे जानते हो!

सेनाध्यक्ष:—जानता हूँ सेनापति कल आपकी अधीनता में हमें

युद्ध करना है। बात यह थी कि मैं और कीर्तिवन्त जी यह चाहते थे कि मुराद और औरङ्गज़ेब ने हम पर अग्नि-वर्षा करने के लिए जो तोपें सजाई हैं, उन्हें अभी रात को आक्रमण करके छीन लिया जाय। ताकि सुबह हमारे लिए मैदान साफ़ हो जावे।

कासिम—महाराज ने क्या कहा ?

सेनाध्यक्ष:—वही जो एक राजपूत कह सकता है। रात को आक्रमण करना मर्दानगी के विरुद्ध है। राजपूत शत्रु को सावधान करके आमने-सामने धर्म-युद्ध करता है—धोखे से विजय प्राप्त नहीं करता। प्रभात होने दो, रण का शंख बजने दो, राजपूतों की तलवारें, यूरोपियनों द्वारा सञ्चालित तोपों का मुँह बन्द कर देंगी।

कासिम:—कैसे ?

सेनाध्यक्ष—यह भी पूछने की बात है। आप राजपूतों को नहीं जानते ! अजी एक-एक राजपूत एक-एक तोप के मुँह में डाट बन कर बैठ जावेगा। उन गोरों की क्या मजाल कि वे तोपें चला सकें।

कासिम:—मालूम होता है आज अफ़ीम ज़्यादा खा गये हो !

दारा के स्थान पर तुम्हीं तो सम्राट नहीं बनना चाहते ?

सेनाध्यक्ष—मैं सम्राट बनूंगा। अजी सम्राट तो वही बनेगा जिसे रोशनआरा बनाना चाहेगी। हम राजपूत तो लड़कर मरने के लिए पैदा हुये हैं, सो लड़ेंगे और मरेंगे। अच्छा आदाब !

(प्रस्थान)

कासिम:--यह क्या कह गया ? जैसे इसने मेरे छिपे हुए पाप का घूंघट खोल दिया। सम्राट वही बनेगा जिसे रोशनआरा बनाना चाहेगी। तो क्या दारा, शुजा, औरंगज़ेब और मुराद सभी चित्र-पट से हट सकते हैं। मनुष्य क्या नहीं कर सकता ! रोशनआरा क्या नहीं करा सकती ! दुनिया में क्या संभव नहीं है। किस अदृश्य की ओर आज मेरे क़दम उठ रहे हैं। ये राजपूत भी औंधी खोपड़ी के आदमी हैं। कार्तिवंत की सलाह मान कर शाही सेना यदि रात को ही आक्रमण कर देती तो लंबी यात्रा से थकी हुई मुराद और औरंगज़ेब की सेनाएँ कुछ न कर सकती। उधर औरंगज़ेब की छावनी में कैसा सन्नाटा है। सब सुख की नींद सो रहे हैं। उन्हें राजपूतों का विश्वास है कि ये रात को आक्रमण नहीं

नादिरा:—उस मेघ की टुकड़ी को जो चाँद को छिपाने के लिए बढ़ी चली आ रही है। जहानारा, तुम मुझे एक गीत सुनाओ। तुम्हें ख़ुदा ने कवि बनाया है, तुम गीत लिख-लिख कर अपने दिल का दर्द हलका कर लेती हो, लेकिन मैं.........

जहानारा:—तुम्हें किस बात का दर्द ? क्या आज भैया से लड़ाई हुई है।

नादिरा:—अब हमारे लड़ाई-भिड़ाई के दिन समाप्त हो गए, जहानारा। अब तो तुम्हारे भैया बड़ी लड़ाइयाँ लड़ते हैं, जिनमें हज़ारों सर कटते हैं, ख़ून की नदियाँ बहती हैं।

जहानारा:—जो बादशाह बनता है, या बनना चाहता है, उसे ये खेल खेलने ही पड़ते हैं, भाभी ! हिन्दुओं के होली के त्योहार को तुम कितना पसंद करती हो, जिन्हें प्यार करते हैं उन पर रंग डालते हुए फूले नहीं समाते, लेकिन बादशाहों की होली खेली जाती है ख़ून से ! हाँ, यह बताओ आज तुम इतनी उदास क्यों हो ?

नादिरा:—न जाने क्यों मेरे प्राणों में चिन्ता ने अपना नीड़ बना लिया है। सुलतान शुजा से युद्ध करने गया है। वह अभी तक नहीं लौटा। माँ की ममता बेचैन है। बहुत सम-

जाने पर भी मन उदास हो ही जाता है। दूसरी बात यह है कि औरङ्गज़ेब और मुराद के विरुद्ध जो हमारी सेना गई है, उसका कुछ हाल नहीं मालूम हुआ!

जहानारा:—भाभी जो होना होगा, होता रहेगा। मर्द इन बातों पर विचार करें। हम अपनी ग्रहस्थी को लेकर घर में निश्चित रहें। दिन भर कर्म कर के आने वाले पुरुष की थकावट मधुर मुसकान और सेवा से दूर करें। स्त्रियों का तो यही काम है जो स्थान प्रकृति में निर्मल करने का है, जो महत्व चाँदनी रात का है, वही मनुष्य के जीवन में स्त्री का है।

नादिरा:—किंतु, जब मर्द का कर्म-क्षेत्र नारी की ग्रहस्थी उजाड़ने लगे तब भी क्या हमें उन बातों पर न सोचना चाहिए और तुम भी तो रात दिन राजनीति की बातों में भाग लेती हो, सो किस लिये?

जहानारा:—इसीलिये कि मेरी कोई ग्रहस्थी नहीं है। मेरे प्राण साधारण नारी के प्राणों की भाँति किसी एक सीमा में बँधे हुए नहीं हैं, इसी लिये तो मुझे आकाश में उड़ना पड़ता है। मानव-हृदय आधार चाहता है, कम से कम स्त्री के प्राण तो बिना बलशाली सहारे के निर्जीव से जान पड़ते हैं। जैसे लताएँ तरु का सहारा पाकर बढ़ती हैं, उसी

है। उसे कौन सच्चा मुसलमान कहेगा।

शाह:—बिना पानी हम कैसे जिएँगे। एक बार भी मैं किले के बाहर जाकर खड़ा हो जाता तो मुझे विश्वास है कि आज भी औरंगज़ेब के आतंक पर शाहजहाँ की ममता की विजय होती। आज भी लोग मेरे लिए प्राण देने को प्रस्तुत हो जाते। लोग एक बार देख पाते कि उनका बूढ़ा सम्राट उनकी सहायता पाने के लिए आया है तो वे हज़ारों लाखों की संख्या में मेरे झंडे के नीचे खड़े हो जाते। हिन्दू और मुसलमान दोनों ही औरंगज़ेब का साथ छोड़ देते।

जहा:—लेकिन बाहर जाने की कोई सम्भावना नहीं है। अब हम पिंजरे में बन्द हैं। और आपने सुना शुजा पराजित हो कर बंगाल को लौट गया। महाराज जयसिंह और जसवंत सिंह ने भी औरंगज़ेब की अधीनता स्वीकार कर ली।

शाह:—सच अन्त में राजपूतों ने भी……

जहा:—यह तो प्रकृति का नियम है कि उदय होते हुए सूर्य को सभी नमस्कार करते हैं। धर्म, न्याय, सिद्धांत और आदर्शों की कौन परवा करता है। सब पहले अपना स्वार्थ देखते हैं। नहीं तो कहाँ हिन्दू-विरोधी औरंगज़ेब और कहाँ महाराजा जयसिंह और जसवन्त सिंह!

शाह:—अब अकेला दारा क्या करेगा ?

जहा:—दारा को आपने जो पत्र लिखा था, वह भी औरङ्ग़ज़ेब के हाथ पड़ गया है।

शाह:—दुर्भाग्य ! अन्धकार ! जीवन में सब ओर अन्धकार। खुदा की मर्ज़ी के आगे अब हमें सर झुका देना चाहिए। बेटी, किले के फाटक खुलवा दो। मेरे विजयी बेटे औरङ्गज़ेब को आने दो। मैं बूढ़ा हो गया हूं, उसके हाथ में राज्य-भार सौंप कर मैं लड़के पढ़ा कर और तुम्हारी कविताएँ सुन कर जीवन के शेष दिन काट लूंगा।

जहा:—मैं आज स्वयं औरङ्ग़ज़ेब के पास गई थी। मैंने उसे विश्वास दिलाया, "अब्बा तुम पर नाराज़ नहीं हैं। यह भाई-भाई की लड़ाई खतम करो। शुजा को बङ्गाल और दारा को पञ्जाब देकर शेष देश मुराद और तुम बाँट लो। मुग़ल-यश को बट्टा न लगाओ, भैया। जो हो गया उसे भूल जाओ। समुद्री मार्ग से आने वाले लालची व्यापारियों की ओर देखो। वे बड़े चालाक और भयंकर हैं। वे हमारी आपसी लड़ाई का लाभ उठा कर अपने पैर यहाँ जमा लेंगे। तुम गृह-युद्ध बन्द करो।" मैं उसके पैरों पड़ी। किसी तरह उसे आपसे भेंट करने को आने के लिए राज़ी किया है। वह आता ही होगा।

शाह:—(खुश होकर) वह आवेगा। सचमुच आवेगा! क्या मुग़ल-साम्राज्य नष्ट होने से बच जावेगा? सच जहानारा मुझे अपने या दारा के हाथ से शक्ति छिनने का खेद नहीं है, मुझे साम्राज्य के भविष्य की चिंता है। राजपूतों ने इस विशाल भवन में चूने का काम किया है! औरङ्गज़ेब उसी चूने को निकाल कर केवल पत्थर पर पत्थर रख कर इस इमारत को खड़ी रखना चाहता है। वह अन्धा है। आज वह आवेगा तो मैं उसे नम्र करूँगा।

(मोहम्मद का प्रवेश)

मोह:—दादा जान (शाहजहाँ के पैर छूता है।)

शाह:—खुश रहो, बेटा!

जहा:—तुम हो, मोहम्मद! औरङ्गज़ेब नहीं आया!

मोह:—उनका इरादा बदल गया।

जहा—तुम क्या आदेश लेकर आए हो?

मोह—मुझ से अब्बा ने कहा कि दादाजान से शाही मोहर और ताजमुकुट ले आऊँ!

शाह:—तुम बिल्कुल फ़रिश्ते हो, मोहम्मद! औरङ्गज़ेब कितना

.खुशकिस्मत है कि उसे ऐसा बहादुर, सरल-हृदय और भोला पुत्र प्राप्त हुआ है।

जहा:--सच बताओ, मोहम्मद! तुम्हारे अब्बा जो कर रहे हैं, क्या वह ठीक है।

मोह:--फूफी! अच्छा और बुरा मैं नहीं जानता। मैं तो आँखें बन्द किए अब्बा का हुक्म बजाता रहता हूं।

शाह:—फिर भी सोचो, बेटा!

मोह--सोचने से बहुत सोचना पड़ता है और झँझटें बढ़ती हैं, दादाजान! मैं तो इतना ही याद रखता हूँ कि अब्बा का हुक्म मानना मेरा कर्तव्य है।

जहा:—और तुम्हारे अब्बा का अपने अब्बा के प्रति कोई कर्तव्य नहीं है। मोहम्मद तुम्हें भी खुदा ने दिल दिया है, दिमाग़ दिया है, आत्मा दी है और आँखें दी हैं। उनका उपयोग करो। अन्धे बन कर न चलो।

मोह:—मेरे हृदय है, आत्मा है, आप यह क्या कहती हैं! मैंने उनका अस्तित्व कभी अनुभव नहीं किया। अनुभव करके क्या सुख मिलेगा? मैंने सिर्फ़ अपने अब्बा का हुक्म मानना सीखा है, मुझे इसी में सुख मिलता है।

जहाः—संसार में आज्ञा-पालन से भी एक बड़ी वस्तु है—विवेक-पूर्वक कर्तव्य का निश्चय करना और उसका पालन करना, ख़ुदा के हुक्म को मानना, जो सब का आदि है।

(मोहम्मद चुप रहता है।)

शाहः—चुप क्यों हो, मोहम्मद ! तुम राज्य-मुकुट लेने आए हो, तो लो ! बेटा, तुम औरङ्गज़ेब से ज़्यादा योग्य हो। तुम मुग़ल-साम्राज्य को विध्वंस से बचा सकोगे। मैं इसे तुम्हारे सर पर रखता हूं। मुझे विश्वास है कि तुम्हारे हाथों में मुग़लों की कीर्ति सुरक्षित रहेगी।

(राज-मुकुट उतार कर मोहम्मद के सर पर रखता है। मोहम्मद वापस शाहजहाँ को दे देता है।)

मोहः—नहीं दादा ! मैं दुर्बल प्राणी हूँ मुझे यह प्रलोभन न दीजिए। मैं यहाँ नहीं ठहरूँगा। इसी राज-मुकुट के लिए इतना हत्याकाण्ड हुआ है। यह बहुत भयंकर वस्तु है ! काम पूरा किए बिना ही लौट जाऊँगा। मैं इसे नहीं छूना चाहता।

(जाने लगता है।)

महा:—ठहरो, मोहम्मद ! यह बताओ कि औरङ्गज़ेब ने स्वयं आने का वचन दिया था, वह आया क्यों नहीं ?

मोह:—वह तो आ रहे थे लेकिन फूफी रोशनआरा ने कहा, "औरङ्गज़ेब, तुम मूर्ख हो। जहानारा ने तुम्हें गिरफ़्तार करने का षड़यंत्र किया है।"

जहा:—रोशनआरा ! ज़हरीली नागिन ! तूने अपने ही वंश का सर्वनाश किया है। तू वह भयंकर आग है जिसने मनुष्यता, स्नेह, दया, ममता और विश्वास को भस्मसात कर दिया है। तूने मुग़ल-सामाज्य को विध्वंस के गढ़े में डाल दिया हैं। तू न होती तो शायद औरङ्गज़ेब को मनुष्य बनाया जा सकता।

मोह:—यह सच है, फूफी ! अब्बा इतने बुरे नहीं है। मैं जाता हूं !

(मोहम्मद का प्रस्थान।)

जहा:—चलो अब्बा, ज़रा बगीचे में बैठेंगे !

(जहानारा सहारा देकर औरंगज़ेब को ले जाती है।)

पट-परिवर्तन।

तीसरा दृश्य

(स्थानः—जामनगर का राजमहल । समय-रात्रि का प्रथम प्रहर । दारा और शाहनवाज़ खाँ बातें कर रहे हैं ।)

दाराः—शाहनवाज़खाँ साहब ! मैं आपका उपकार जीवन भर नहीं भूल सकता । भँवर में फँसे हुए निरीह प्राणी की सहायता को कोई विरला साहसवाला पुरुष ही दौड़ता है । व्यर्थ ही कोई अपना जीवन खतरे में क्यों डाले ? आपने अपने दामाद के विरुद्ध इस अभागे को आश्रय देकर संसार के सामने नया आदर्श रखा है । वास्तव में आप मनुष्य नहीं देवता हैं ।

शाहः—यह आप क्या कहते हैं । मैं यदि तुम्हारी मदद न करता तो अपने आपको मनुष्य नहीं राक्षस समझता । मुझमें देवतापन का कोई गुण नहीं है । मैं तो साधारण मनुष्य हूँ । जिस सिद्धान्त और आदर्श के लिए आपने अपना जीवन इस विपत्ति की आंधी और तूफ़ान में डाल दिया है, वह आदर्श मुझे अत्यन्त प्रिय है । मैं मुसलमानों के दिलों से धार्मिक कट्टरता का अन्त चाहता हूँ । मैं चाहता हूँ कि मुसलमान देखें कि जो हिदायतें कुरान शरीफ़ में दी गई हैं वे ही हिन्दुओं के वेद और उपनिषदों में हैं । इनमें और

उनमें फ़र्क ही क्या है, और यदि हो भी तो धर्म के नाम पर जन्मभूमि के टुकड़े तो हम न करें। हमें मुसलमानों को क्यों बार बार यह याद दिलाया जाता है, कि हम बाहर से आये हैं। हिन्दुस्तान हमारी जन्म-भूमि नहीं है। कभी हमारे बुजुर्ग बाहर से आये थे, इसीलिए क्या हमें इस देश को अपना नहीं समझना चाहिए।

दारा—मेरा तो दृष्टि-कोण ही और है। मैं तो मनुष्य-मात्र को एक समझता हूँ। हम जो मुसलमान कहाते हैं, आदिम आर्यों के वंशज हैं। जब इस्लाम का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था, तभी हिन्दुस्तान के सूर्य-वंशी और चंद्र-वशी राजाओं ने अफ़गानिस्तान, ईरान, अरब और तुर्किस्तान में अपनी राज्य-सत्ता स्थापित की थी, अपने धर्म का प्रसार किया था। मुसलमान तो उन्हीं क्षत्रियों की सन्तान है। आज धर्म के परिवर्तन से वह रक्त का सम्बन्ध तो नहीं भूला जा सकता। भारतवर्ष सदा से अपना था और सदा अपना रहेगा। हम पहले भारतवर्ष के हैं, पीछे अरब और तुर्किस्तान के। हम इसे पराया कैसे समझें ?

(एक सैनिक का प्रवेश।)

सैनिक—(कोर्निस कर के) एक सिपाही यह पत्र लाया है (पत्र दारा को देता है)

दारा:—(पत्र पढ़ कर) तुम उस सिपाही को ठहराओ।

(सैनिक का सलाम करके प्रस्थान)

तो शाहनवाज़खाँ साहब, मेरी किस्मत का पाँसा मानो फिर बदलना चाहता है। यह बीजापुर तथा दक्षिण की दूसरी मुसलमानी रियासतों की तरफ़ से मुझे निमन्त्रण-पत्र है। वे विश्वास दिलाते हैं कि मुझे दिल्ली का सम्राट बनाने के लिए हरतरह के खतरे उठाने को वे तैयार हैं।

शाहनवाज़:—दक्षिण के मुसलमानों पर अभी औरङ्गज़ेब का जादू नहीं चला है, इसीलिए वे यह अनुभव करते हैं कि दिल्ली के तख्त पर हिंदू-विरोधी व्यक्ति को बैठाने का अर्थ है मुसलमानों के भविष्य को सदा के लिए अंधकार पूर्ण कर देना। तिस पर वे समुद्री मार्ग से आने वाले विदेशी व्यापारियों की गति-विधि को भी पहचानते हैं। जानते हैं कि यदि यहाँ हिंदू और मुसलमानों में गृह-युद्ध चलता रहा तो दोनों इन्हीं व्यापारियों की दासता के पाश में फँसेंगे, इसीलिए वे चाहते हैं कि दिल्ली के सिंहासन पर वही व्यक्ति आसीन हो जिस पर हिन्दुओं और मुसलमानों का समान रूप से विश्वास हो।

दारा:—पर मुझे तो मुसलमानों का विश्वास प्राप्त नहीं हुआ!

शाहनवाज़ खाँ—ऐसा आप क्यों कहते हैं ? माना कि आप लाहौर के मियाँ मीर और उनके अनुयायी मौलाना शाह-बदख़शी के मुरीद हैं। आप अब कादिरिया सम्प्रदाय को पसन्द करते हैं, फिर भी क्या आप मुसलमान नहीं हैं ? पञ्जाब के सूबेदार दाऊँदखाँ को आपने औरङ्गज़ेब के षड़यन्त्र और अपने भोलेपन से गँवा दिया, फिर भी ऐसे समझदार मुसलमानों की कमी नहीं जो आपका साथ दें।

(सैनिक का प्रवेश)

सैनिक:—(कोर्निश करके) एक और सिपाही यह ख़त लाया है। (ख़त दारा को देता है।)

दारा:—(ख़त पढ़कर सैनिक से) उस सिपाही के ठहरने का भी प्रबन्ध कराओ।

(सैनिक का सलाम करके प्रस्थान)

यह शिवाजी का ख़त है। उन्होंने भी मुझे अपने पहाड़ी प्रदेश में आमंत्रित किया है। वह लिखते हैं, प्राणों को तुच्छ समझने वाले, महाकाल से भी लोहा लेने वाले मराठे आपको अपना सम्राट मानने को प्रस्तुत हैं, बल्कि आपको दिल्ली के सिंहासन पर आसीन करना अपने जीवन का चरम

कर्तव्य समझते हैं। हमें मुसलमानों से विरोध नहीं, लेकिन हिन्दू-विरोधी नीति का सूत्रपात करने वाले औरङ्गज़ेब के हाथ में साम्राज्य की शक्ति हम बर्दाश्त करने को तैयार नहीं। बोलो शाहनवाज़ख़ाँ साहब, आपकी क्या राय है ?

शाहनवाज़:—इससे अच्छी बात और क्या हो सकती है ! आत्म-रक्षात्मक युद्ध करने के लिए दक्षिण से अच्छा स्थान क्या हो सकता है ? जामनगर के महाराणा साहब भी अपना सर्वस्व आप पर न्योछावर करने को प्रस्तुत हैं। उन्होंने अपनी पुत्री का विवाह सिपरशिकोह से करने का भी निश्चय प्रकट किया है।

दारा:—मैं महाराणा की इच्छा का विरोध कैसे कर सकता हूँ। जिसे संसार में कहीं सहारा नहीं था उसे उन्होंने सहारा दिया है। औरंगज़ेब की चढ़ती हुई शक्ति की अवहेलना करके अपने अस्तित्व को भी खतरे में डालकर अतिथि-धर्म का पालन किया है, मैं उनकी किसी इच्छा का विरोध नहीं कर सकता। अच्छा, अब हम इन सिपाहियों को उचित उत्तर देकर विदा करें।

(दोनों का प्रस्थान)

पट-परिवर्तन

———

चौथा दृश्य

[समय--रात्रि का प्रथम प्रहर। स्थान—रोशनआरा का कमरा। रोशनआरा और दासी बातें कर रही हैं।]

दासी:—आपने सुना, औरंगज़ेब ने मुराद को भी गिरफ्तार करके ग्वालियर के किले में भेज दिया है।

रोशन:—हाँ, सब सुनती रहती हूँ। सब देखती रहती हूं। विध्वंस का चक्र जब एक बार चल पड़ता है तो वह कहाँ रुकेगा, कब रुकेगा यह बड़े-बड़े ज्योतिषी भी नहीं बता सकते। जब बाँध टूट जाता है तो उसके प्रवाह का नियंत्रण नहीं किया जा सकता। जो सामने आता है उस भयानक प्रवाह का शिकार हो जाता है। रोशनआरा की ईर्ष्या ने जो गृह-युद्ध की ज्वाला प्रज्ज्वलित कर दी है, क्या वह बिना सर्वनाश किए रुकेगी। उसमें सब जलेंगे। मुराद ग्वालियर में बन्द है, शुजा की शक्ति समाप्त हो चुकी ही समझो। दारा दर-दर मारा-मारा फिर रहा है। रह गई जहाँनारा। वह जिन्दगी भर अपना सूना जीवन लिए कराहती रहेगी। और जो जलाने वाले हैं वे भी अपनी आग से स्वयं जलेंगे!

दासी:—अब तो अभागे दारा का पीछा छोड़ना चाहिए।

राशन:—तुम भोली हो, हम सोचते हैं दारा की दिल्ली और लाहौर में भी पराजय हुई। आज उसके पास न धन है न सेना। वह एक साधारण आदमी से भी अधिक कंगाल, निर्बल और साधनहीन है। लेकिन यह हमारा भ्रम है। दारा की शक्ति आज भी क्षीण नहीं हुई। आज भी वह राजपूतों के दिलों में राज करता है। औरंगज़ेब की तलवार की चमक देख कर जो सर झुकते हैं वे दारा की केवल एक चितवन पर चढ़ जाते हैं। दारा के प्रति जनता के हृदय में स्नेह है उसे औरङ्गज़ेब की तोप-तलवारें कब तक दबाए रख सकेंगी। दारा जंगल में भी जा खड़ा होगा तो उसे अनुयायियों की कमी न पड़ेगी। मैं समझती थी मैं जहानारा और दारा का अभिमान चूर्ण करूंगी लेकिन आज मेरा ही अभिमान चूर्ण होगया। लोग मुझे भय की दृष्टि से देखते हैं, श्रद्धा और प्रेम से नहीं। मेरी ओर उठने वाली आँखों में एक तीक्ष्ण व्यंग, एक गहरी घृणा और एक अजीब उपेक्षा-सी नज़र आती है। सच मान कहूँ तो कभी-कभी मेरा हृदय भी मुझे कोसता है।

दासी:—क्या आपको पश्चात्ताप हो रहा है ?

रोशन:—पश्चात्ताप ! नहीं ! पतन के पथ पर जो पैर पड़ गया। वह ऊपर नहीं उठ सकता। औरङ्गज़ेब, वह भोला मनुष्य !

दुनिया उसे धूर्तराज कहती है, लेकिन कोई यह नहीं जानता कि उसका दिमाग़ कौन है। वह युद्ध में तलवार चलाने के सिवा क्या जानता था। मैंने उसे ईर्षा की भाषा सिखाई, मैंने उसे धर्म को शस्त्र बनाना सिखाया। आज वह विपथ पर मुझसे कहीं आगे बढ़ गया है। उसने जो-जो किया उसकी मुझे कल्पना भी न थी। वह भोला है, वह शायद यह भी नहीं जानता कि वह अपराध कर रहा है।

दासी—अब भी ग़लती सुधारी जा सकती है।

रोशन—नहीं! मनुष्य ग़लती छिपाने का यत्न करता है, सुधारने का नहीं। ग़लती छिपाने के लिए और ग़लती करता है। अब पथ नहीं बदला जा सकता। उज्जैन और शम्भूगढ़ में जिन सहस्त्रों राजपूतों का रक्त बहा है, उनके बलिदान को क्या हिंदू जाति भूल जावेगी। चिरकाल तक उसके हृदय में यह आग सुलगती रहेगी। मुग़ल—साम्राज्य की विशाल इमारत की नींव हिल गई है। उसकी दीवारों में दरारें पड़ गई हैं। अब उसे किस चीज़ से जोड़ा जाय!

(औरंगज़ेब का प्रवेश और दासी का प्रस्थान)

औरंग:—रोशनआरा!

रोशन:—आओ भैया ! दारा के क्या समाचार हैं।

औरंग:—उसके दिन फिर फिरे हैं।

रोशन:—किस तरह ?

औरंग—मेरे ससुर शाहनवाज़ खाँ की महरबानी से !

रोशन:—ससुर अपने दामाद का दुश्मन! अजीब बात है।

औरंग—तुम भी इसे अजीब बात कहती हो, रोशन ! जब भाई-भाई, बहन-भाई और बाप-बेटे एक दूसरे का सर चाहने लगे तो सभी कुछ हो सकता है। यह दुनिया है, यहाँ सब कुछ हो सकता है।

रोशन:—अब स्थिति क्या है ?

औरंगजेब:—बहुत गम्भीर ! शाहनवाजखाँ के आग्रह पर आग-नगर के महाराणा ने दारा का आदर के साथ स्वागत किया। सिपर शिकोह के साथ महाराणा ने अपनी लड़की की शादी करके दारा से अपना सम्बन्ध चिरस्थायी बनाया है।

रोशन:—इन विपत्ति के दिनों में भी दारा ने अपने पुत्र का विवाह किया है।

औरंग:--विवाह क्या यह तो राजनीतिक गठ-बन्धन है।

रोशन:--अभी तक हिन्दू राजाओं में दारा का साथ देने का हौसला है।

औरंग--इतना ही नहीं दक्षिण से शिवाजी की ओर से दारा को सहायता देने का संदेश आया है। बीजापुर आदि मुसलमानी रियासतें भी दारा का साथ देने को तैयार हैं। महाराज जसवन्त सिंह ने तो खजवाहा में ही, जब हम शुजा से युद्ध कर रहे थे, हमारे तम्बू लूट कर अपना गुस्सा उतारा था।

रोशन:--अगर यह सब मिल गये तो दारा का पैर मज़बूत हो जायेगा।

औरंग:--इसीलिए तुम्हारे पास आया हूँ। लाहौर में दाऊद खाँ के सहयोग से दारा का दल जब अत्यन्त बलवान हो गया था तब तुम्हीं ने चिट्ठी लिखने की सलाह देकर मुझे विजय का मार्ग दिखाया था।

रोशन:--तो तुमने दर असल खत लिखदिया था।

औरंग:--हाँ, मैंने दाऊद खाँ को लिखा था, तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी सलाह के मुताबिक मैं सेना भेज रहा हूँ। आशा

है तुम ठीक समय पर दारा के अस्त्र-शस्त्रों पर अधिकार कर लोगे।" पत्र इस तरह भेजा कि वह दारा के हाथ लगे। यही हुआ। दारा ने विश्वास-पात्र सेनापति दाऊद खाँ को अपमानित करके विदा कर दिया। कुछ ऐसी ही तरकीब अब करनी चाहिए।

रोशन:—दारा ने क्या निश्चय किया है।

औरंग:—महाराज जसवन्त सिंह ने उसे राजपूताना में बुलाया है। और वह अजमेर जा रहा है।

रोशन:—तो जसवन्त सिंह को ही फोड़ लो। महाराजा जयसिंह को भेजकर उन्हें थोड़ा सब्ज़बाग़ दिखाकर ठण्डा करदो। यह अस्थिरचित्त राजपूत थोड़ा सम्मान पाकर दारा की सहायता करने से विरत हो जावेगा। यह अच्छा हुआ जो दारा ने दक्षिण न जाकर जसवन्तसिंह का निमंत्रण स्वीकार किया। दक्षिणी मुसलमानी रियासतों और शिवाजी की सहायता से दारा क्या न कर गुज़रता ?

औरंग:—तुम मेरे साथ चलो तो इस विषय में अच्छी तरह सोच लिया जावे।

(दोनों का प्रस्थान)

६८—पटपरिवर्तन।

पाँचवाँ दृश्य

[समय-दोपहर। स्थान-जंगल। एक पेड़ के नीचे दारा और नादिरा।]

नादिरा:—(पेड़ की छाया में बैठ जाती है) अब नहीं चला जाता। बड़ी प्यास लगी है। आह! पानी! पानी!!

(लेट जाती है।)

दारा:—पानी! नादिरा, इस जंगल में दूर तक कहीं पानी नहीं है। थोड़ा और चलो, प्रिये।

नादिरा:—और कितना चलें, कब तक चलें। बहुत तो चल चुके। क्या जीवन के पथ का अभी अंत नहीं आया। आह! एक वह दिन था जब बहुमूल्य शराब पानी की तरह हमारे यहाँ बहती थी, एक यह दिन है, जब एक बूंद पानी के लिये तरसना पड़ रहा है। वसुंधरा कितनी कठोर हो गई है, क्या हमारे लिये उसके अन्तर में एक बूंद भी जल नहीं। आकाश कितना नीरस हो गया है, क्या हमारे लिये उस के पास जल का एक भी कण नहीं है।

दारा:—यह सब मेरा ही अपराध है।

नादिरा:—इस में तुम क्या कर सकते हो, प्रियतम! तुम मेरे लिये एक क्षण के लिये भी कठोर नहीं हुए। तुम्हारी

आँखों में अब भी मेरे लिये बहुत पानी है। राज-भवन छूट गये। हाथियों और घोड़ों की पीठें हमारा विश्राम-भवन बनीं, किस्मत ने वह भी न रहने दिया। अब जंगल के काँटों और कंकरों से भरी भूमि ही हमारी सुख-सेज है।

दारा:---यह सब भाग्य का खेल है, नादिरा! ऐसी भयंकर बीमारी में भी तुम ने ज़रा भी मुझे उलाहना नहीं दिया, इन विपत्ति के दिनों में भी तुम्हारा इलाज न करा सका। इधर तुम्हारा शरीर ज्वर के ताप से जलता था, ऊपर घोर ग्रीष्म की दोपहर का सूर्य प्रचंड किरणों से प्रकृति के कण-कण को व्याकुल कर रहा था, तिसपर पीछे से हमारा पीछा करने वाली औरंगज़ेब की सेना से गोले बरसते थे। तुम ने तब भी कभी धैर्य नहीं छोड़ा। राम के लिये सीता ने जो कष्ट सहे, मेरी सीता तुम ने क्या उस से कम सहे।

नादिरा—बड़ी से बड़ी विपत्ति में भी तुम ने मुझे अपने साथ रखा है, इससे बड़ा सौभाग्य एक नारी को क्या मिल सकता है? मैं बहुत सुख से तुम्हारे चरणों में अपने प्राण त्याग सकूंगी, प्रियतम! हमने जीवन भर सत्य का पथ नहीं छोड़ा इस आत्मिक सुख के आगे दिल्ली क्या संसार का साम्राज्य भी तुच्छ है। हमने प्रलोभनों में फँस कर या विपत्ति

से डर कर अपने आदर्शों को नहीं छोड़ा। अब हम इस दुनिया को छोड़ भी दें तो हमें विश्वास है कि हमारा आदर्श जिएगा।

दारा:—उठो नादिरा! थोड़ा और चलने से हम हिन्दुस्तान की सीमा के पार पहुँच जायेंगे। मुझे विश्वास है किसी दिन बादशाह हुमायूँ की भाँति फिर नई सेना लेकर आ सकेंगे। औरंगज़ेब को दण्ड देने योग्य शक्ति हमें प्राप्त होगी।

(नादिरा उठने का यत्न करती है लेकिन उठ नहीं पाती)

नादिरा:—आह, पानी! थोड़ा पानी मिल जाय तो शायद कुछ चल पाती!

(नेपथ्य में गान)

नाविक नौका को खे चल ।

यद्यपि जर्जर तरणी तेरी ।
नभ में छाई घोर अँधेरी ।
सर पर मृत्यु लगाती फेरी ।
फिर भी तू नौका ले लच ।
नाविक, तरणी को खे चल ।

था कि महाराज जसवंतसिंह का राजपूताना आने का निमंत्रण मिला. किन्तु जब मैं अजमेर पहुँचा तो महाराज मेरी सहायता को न आए। महाराज जयसिंह ने उन्हें रोक लिया। औरंगज़ेब पूरी तैयारी के साथ पहुँचा था। मुझे बिना राजपूतों की सहायता के उससे लड़ना पड़ा। औरंज़ेगब के ससुर शाहनवाज़खाँ ने मेरी ओर से प्राणों की बाजी लगा कर युद्ध किया। पहले तो औरंगज़ेब की सेना के पैर उखड़ गए, लेकिन औरंगज़ेब एक ही धूर्त है। उसने रिश्वत देकर मेरे तोपख़ाने को अपनी ओर मिला लिया। अपने ही आदमियों के विश्वास-घात ने मुझे भागने के लिये मबूजर किया। नादिरा को मैंने पहले ही फाही सागर के पास भेज रखा था। भागते समय इसे भी साथ न ले सका। न जाने कितने ज़ंगलों, रेगिस्तानों और पहाड़ों में टक्करें खाते हम दोनों मिल पाए हैं। शेष सभी साथी छूट गये। सारा धन लुटेरों ने लूट लिया। अब तो मैं तुम से भी ज्यादा कंगाल हूं।

प्रकाश:—तुम संसार में सब से अधिक धन वाले हो, दारा ! तुम भारत के हृदय सम्राट हो। युग-युग तुम्हारा भारत पर राज्य रहेगा, युवराज ! भारत की राष्ट्रीय एकता के लिये तुम्हारा प्रयत्न इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जावेगा। अभी क्या

बिगड़ा है। तुम्हें धन की ज़रूरत नहीं। भारतवासी तुम्हारे लिये प्राणों की बलि देना अपना कर्तव्य समझते हैं भारत के प्रत्येक घर का धन तुम्हारा है। भारत की जनता तुम्हारा बल है। यदि आज हमारे पास शस्त्र भी न हों तो भी केवल बलिदान की शक्ति से हम अत्याचार, अनाचर पर विजय पावेंगे। अब भी बहुत कुछ हो सकता है। तुम हो तो धन भी आजावेगा—सेना भी जमा हो जावेगी!

दारा:—जब तक साँस है तब तक आशा है। इन कष्टों ने मुझे हताश नहीं किया है। अन्तिम क्षण तक मै प्रयत्न करूंगा। अभी मुझे अपने अपराधों का पूरा प्रायश्चित्त करना है। बाबा, आज तुम से मेरी जो भेंट हुई, उसे मैं खुदा की कृपा की एक किरण समझता हूँ। मैंने आज तक जो कुछ किया वह मेरी आत्मा की पुकार पर किया। दुनियां शायद मुझे मुसलमान न माने, इसका मुझे ज़रा भी खेद नहीं, पर मैं तुम से सच कहता हूं मैं सच्चे इस्लाम का भक्त हूँ, उस इस्लाम का जिसकी झाँकी मुझे, खुदा उन्हें शांति दे, मेरे पीर स्वर्गीय मियाँमीर और उनके शिष्य मौलाना शाह बदख्शी के चरणों में बैठ कर मिली है। मुसलमान 'एक' पर ईमान रखता है। 'अनेक' पर नहीं। वह सिवा खुदा के किसी और का अस्तित्व स्वीकार नहीं करता।

दुनिया के ज़र्रे-ज़र्रे में उसी एक को उसी खुदा को, देखता वह अपने अन्दर जो दुर्बलतायें हैं उनके खिलाफ जह करता है, लेकिन बाहर की दुनिया को प्रेम से जीतता है उसका हृदय इतना विशाल है जितना कि खुदा का विस्त है और जब वह अपने आपको पूर्ण रूप से जान पाता तो देखता है कि वह स्वयं खुदा है। यह दुनिया और इ दुनिया में सब कुछ सिवा खुदा के कुछ नहीं है। बाबा, मे राय में यही इस्लाम है और यही हिन्दुओं का वेदान्त है मैंने इसी सिद्धान्त के लिये इतना कष्ट सहा है। जीवन अन्तिम पल तक इसी के लिए संघर्ष करूंगा। मैंने गीत को भी पढ़ा है, उसका फ़ारसी में अनुवाद भी किया है मैं कर्म के तत्व को मानता हूँ। फल की मुझे चिन्ता नह है। (नादिरा से) चलो, नादिरा अब हम चलें !

प्रकाश:—इस समय कहां जाओगे ? पास ही मेरी कुटी है आज वहीं विश्राम करो !

छठा दृश्य

[स्थान—आगरा का किला। शाहजहाँ बच्चों को पढ़ा रहा है। शाहजहाँ के पास रंगों की प्यालियाँ तूलिका और कई हाथ की बनी हुई तसवीरें पड़ी हैं। सामने बच्चे तसवीरें बना रहे हैं।]

शाह:—(पास बैठे हुए एक बच्चे के पास जाकर) देखें, तुमने क्या बनाया है ?

एक बच्चा:—गुलाब का फूल !

शाह:—ठीक अब इस में पत्तियाँ बनाओ उसके नीचे डंडी में काँटे बनाओ। तभी तो तस्वीर पूरी होगी, बेटा। जैसे संसार में सुख-दुख साथ रहते है, उसी तरह गुलाब के पेड़ में फूल होते हैं और कांटे भी। (दूसरे बच्चे का कागज़ देख कर) तुमने क्या बनाया ?

दूसरा बच्चा:—यह एक नदी हैं।

शाह:—ठीक ! लेकिन इस में एक भँवर बनाओ, उस में एक नाव फँसाओ। जैसे सुखी से सुखी मनुष्य की ज़िंदगी बिना किसी दुर्घटना के समाप्त नहीं होती, उसी तरह बेटा नदी का बल भँवर के बिना नहीं जान पड़ता। (तीसरे बच्चे से) तुमने क्या बनाया ?

तीसरा बच्चा:—समुद्र !

शाह:—ठीक ! इस में तूफ़ान का दृश्य बनाओ । लहरों में डूबता हुआ जहाज़ दिखाओ । मनुष्य के जीवन में कभी ऐसा तूफ़ान उठता है जिसमें उसके सब मनसूबे डूब जाते हैं । (चौथे बच्चे से) तुमने क्या बनाया है ।

चौथा बच्चा:— बिल्ली और उसके बच्चे ।

शाह:—लेकिन तुमने एक बच्चा बिल्ली के मुँह में क्यों दे दिया है ।

चौथा बच्चा:—बिल्ली अपने बच्चे को खा जाती है । जब उस के बच्चे पैदा होते हैं तो उसे बड़ी भूख लगती है, उस वक्त उसे खाने को न मिले तो अपने ही बच्चे को खा जाती है ।

शाह:—तुम ऐसे जानवर को जानते हो जिसके बच्चे बड़े हो कर अपने माँ-बाप को खा जाते हैं । नहीं तुम नहीं जानते । तुम जानोगे, जब मेरे जैसे बूढ़े हो जाओगे, जब तुम्हारे बेटे औरंगज़ेब की तरह जवान होंगे । अच्छा जाओ आज की पढ़ाई खतम ।

(सब बच्चों का प्रस्थान)

शाह:—यदि मनुष्य हमेशा ही बच्चा रह सकता, यदि वह अभिलाषाओं के जाल में अपने जीवन को न उलझाता, तो दुनिया कितनी सुन्दर हो जाती। मैं अपने दुखी दिल को इन बच्चों से बहलाना चाहता हूँ।

(रोशनआरा का प्रवेश)

रोशन:---अब्बा ! (कंठावरोध)

शाह:---तुम हो रोशन ! कितनी मुद्दत बाद तुम आई हो, और मुँह से बात भी नहीं करती !

रोशन:---(पास बैठ कर) अब्बा !

शाह:---(आँखों में आसू भर कर) बेटी !

रोशन:---आप मुझे माफ़ कर दें !

शाह:---तुमने क्या अपराध किया है ?

रोशन: --आप सब जानते हैं। मैंने आज तक अपने आपको धोखा दिया। मन को बहुत समझाया, लेकिन अपराध की ज्वाला चैन नहीं लेने देती। मर्द काम-धंधों में अपना इतिहास भूल सकता है, लेकिन स्त्री क्या करे उसके पास तो इतना काम नहीं है कि अपने गुनाह, अपना दुख-

दर्द भुला सके। मेरा तो जी करता है मैं आत्म-हत्या कर लूं। अब्बा, आपने कैसे इतने आघात बर्दाश्त किए ?

शाह:—इन रंग की प्यालियों, इन कूचियों और इन कागज़ों से। मैं इन कागज़ों पर अपने दर्द की तस्वीर खींच कर हलका हो जाता हूं। ये ललित कलाएँ न हों तो संसार में आत्म-हत्या करने वालों की संख्या बढ़ जाय। बेटी, यदि वेदना को बाहर निकलने को जगह न मिले तो हृदय फट जाय।

रोशन—तो आप ने मुझे माफ़ किया, अब्बा !

शाह:—बेटी, तुम मेरी सन्तान हो ! तुम गुनाह करो तब भी मैं तुम्हारा भला ही चाहूंगा। जो होना था हो गया। आगे भी यदि तुम प्रेम से हिल-मिल कर रह सको तो मैं सुख से मर सकूंगा।

रोशन:—मैं कोशिश करूंगी। लेकिन औरंगज़ेब ! वह तो अब मेरा कहा भी नहीं मानता !

शाह:—खुदा की मर्ज़ी पूरी हो ! मेरे ज़िंदगी के दिन तो किसी न किसी तरह पूरे हो जायँगे, लेकिन तुम इस बात का खयाल रखना कि मुग़ल-शक्ति को विदेशियों के आगे झुकना

न पड़े। चलो बेटी, जहानारा इंतज़ार कर रही होगी। मेरी ये प्यालियाँ, ये तसवीरें ले चलो।

(रोशनआरा सब सामान उठाती है। दोनों का प्रस्थान।)

पट-परिवर्तन

सातवाँ दृश्य

[स्थान:—हुमायूं का मक़बरा। जहानारा अकेली खड़ी है। उसकी आँखों से आँसू बह रहे हैं।]

जहा:—यह हिंदू-मुस्लिम-ऐक्य के लिए अपने साम्राज्य की भी परवा न करने वाले स्वर्गीय-सम्राट हुमायूंशाह का मकबरा है। आज इसी में दारा को भी सुला दिया जावेगा। राष्ट्रीय एकता के लिए बलि होने वाले शहीद के सोने के लिए यही उपयुक्त स्थान है। दारा! आखिर तुम्हें दुनिया से जाना ही पड़ा। शायद यह दुनिया भले आदमियों के लिए नहीं है। यहाँ वही रह सकता है जो पक्का जालसाज़, झूठा, ढोंगी, बेईमान और दग़ाबाज़ है। मनुष्यता का कैसा पतन है?

(नेपथ्य में गान ।)

स्वप्न मेरा खो गया रे
कौन उसको खोज लाए ?

गीत गूँजा था घड़ी भर
मोहनी ले विश्व भर की।
दिल विकल हो रो रहा है
कौन फिर वह गीत गाए ?
स्वप्न मेरा खो गया रे
कौन उसको खोज लावे ?

ल... दिया, लेकर दिया वह
था फरिश्ता एक आया।
कौन इस तममय निशा में
राह हमको अब दिखाए।
स्वप्न मेरा खो गया रे
कौन उसको खोज लाए ?

हाय, जिसके लोचनों से
　प्रेम का दरिया बहा था।
　　रूठ कर वह चल दिया है,
　　　कौन उसको अब मनाए।
　　　　　　स्वप्न मेरा खो गया रे
　　　　　　　कौन उसको खोज लाए ?

आज वीणा रो रही है
　तार टूटे जा रहे हैं।
　　साँस सहसा रुक रही है
　　　कौन अब धीरज बँधाए।
　　　　　　स्वप्न मेरा खो गया रे
　　　　　　　कौन उसको खोज लाए।

जहा:—यह तो वीणा का स्वर है।

(गाते-गाते वीणा और प्रकाश का प्रवेश।)

प्रकाश:—शाहज़ादी जहानारा !

जहा:—हाँ, बाबा, मैं ही हूँ। तुम लौट आए !

प्रकाश:--हाँ, लौट तो आया लेकिन भारत के सौभाग्य को लौटा कर न ला सका !

जहाँ:--कल तुम दिल्ली में थे--बंदी दारा का तुमने जुलूस देखा था।

वीणा:--नहीं देखा यह अच्छा ही हुआ। वह दृश्य देखकर क्या ज़िंदा रहा जा सकता था ?

जहाँ:--मनुष्य को क्या नहीं सहना पड़ता। वीणा, इन्हीं बेहया आँखों से कल दारा को एक मैली-कुचैली छोटी-सी हथिनी पर खुले हुए हौदे में बैठा देखा था। उसके पीछे उसका छोटा बेटा सिपर सिकोह था। उसके पीछे नंगी तलवार ताने जल्लाद नज़ बेग बैठा था। बाबा, वह दृश्य भुलाए नहीं भूलता। प्राणों में काँटे सा चुभ रहा है, अंगारे सा धधक रहा है। इन्हीं दिल्ली की गलियों में किस शान से दारा की सवारी निकलती थी, यहीं यात्रा से मैले हुए, फटे चीथड़ों में, सर पर मोटी सी पगड़ी रखे दारा को गुज़रना पड़ा। सारा नगर शोक के समुद्र में डूब गया। बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष, सभी रो रहे थे। ऐसा कौन था जिसकी आँखों से आँसू नहीं बहे। सारे शहर में हाहाकार मच गया। प्रत्येक नागरिक यह अनुभव करता था जैसे स्वयं उसके

साथ कोई भयंकर दुर्घटना घटी हो। आज भी मानों दिशाएँ रो रही हैं।

वीणा:—रहने दो फूफी मैं यह सब न सुन सकूंगी।

जहा:—तुम नहीं सुन सकोगी, बेटी, तो मेरे दिल में जो इतना शोक भरा पड़ा है, वह किसके दिल में उतारूं।

प्रकाश:— तुम कहो, बेटी, मैं सुनूंगा।

जहा:—अपमान और वेदना के कारण दारा ने सर ऊंचा नहीं किया। केवल एक बार उसने आँखें उठाकर देखा था, जब एक भिखारी ने कहा, "युवराज दारा, तुम जब पहले इधर से गुज़रते थे तब कुछ न कुछ देते थे। आज तो तुम्हारे पास कुछ नहीं है।" दारा ने अपनी आँखें उठाईं। भिखारी की तरफ़ देखा। कंधे से चादर उतार कर उसे दे दी।

प्रकाश:—(आँखें पोछते हुए।) धन्य हो दारा! युग-युग तक ज़माने के हृदय में तुम्हारा नाम लिखा रहेगा। तुमने भारत को जो कुछ दिया है, उसका वह सदा उपकार मानेगा। तुम मर कर भी अमर रहोगे।

जहा:—फिर बाबा जलूस के बाद न्याय का खेल हुआ। बड़े-बड़े मौलवी और काज़ी बैठे, सरदार बैठे। सब ने दारा को

मान में एक नक्षत्र की वृद्धि हुई है। वह अपने तीव्र प्रकाश से प्रत्येक रात हिन्दुस्तान को ही नहीं संपूर्ण संसार को मनुष्यता और प्रेम का सङ्गीत सुनावेगा। समय के प्रवाह में दिल्ली का लाल किला बचेगा या नहीं, आगरा का ताजमहल रहेगा या नहीं, यह हुमायूं शाह का मक़बरा भी बचेगा या नहीं, इसे कौन जाने, लेकिन जब तक चाँद-सूरज रहेंगे दारा की स्मृति हिन्दुस्तान के हृदय में घर किए रहेगी। बिना कोई रस्म अदा किए यहीं हुमायूं शाह के पास उसे दफ़ना दिया जायगा।

(जनाज़ा आता है। उसे उठाकर रखा जाता है। प्रकाश और वीणा उसपर फूल चढ़ाते हैं।)

नहानारा:—हा दारा! (पछाड़ खाकर जनाज़े के पास गिर पड़ती है। बेहोश हो जाती है।

प्रकाश:—आज एक महान स्वप्न-भङ्ग हो गया। क्या राष्ट्रीय एकता के लिये एक महात्मा का बलिदान व्यर्थ जायगा। क्या दारा का स्वप्न सदा स्वप्न ही बना रहेगा! क्या भारत की भावी पीढ़ियाँ इस महान बलिदान को भूल जावेंगी। इस मक़बरे में सोने वाली दो महान आत्माएँ पुकार-पुकार कर क्या कह रही हैं? हिन्दुस्तान क्या तू इस आवाज़ को सुनेगा! सुनकर कुछ करेगा।

[जहानारा होश में आती है। प्रकाश उसे सहारा देकर उठाता है। जहानारा खड़ी हो जाती है।]

प्रकाशः—मुझे क्षमा करना, बेटी ! आज तुम्हें शाहज़ादी न कह कर बेटी कहने को जी कर रहा है। वह पूर्ण पुरुष दारा—जो न केवल मुसलमानों का, न केवल हिन्दुओं का, बल्कि सारे संसार का प्रकाश-स्तम्भ था—जिसका व्यक्तित्व देश-काल की सीमा के पार पहुँच चुका था, मुझे एक धरोहर दे गया है, वह मैं तुम्हें सौंप रहा हूं। (हस्त लिखित किताबों का एक बड़ा बंडल जहानारा के हाथ में देता है।) दारा ने ये पुस्तकें देते हुए कहा था, इस बण्डल में संस्कृत से फ़ारसी में किया हुआ उसका गीता और ५० उपनिषदों का अनुवाद है, यही उसकी अपने मुसलमान भाइयों को देन है। इन्हें पढ़ कर वे हिन्दुओं को जाने। गीता और उपनिषदों के अनुवादों के अतिरिक्त एक पुस्तक में उनकी हिन्दी कविताओं का संग्रह है, यह उनकी हिन्दुओं को भेंट है। उसके अतिरिक्त एक प्रति उनके जीवन भर के स्वाध्याय और साधना का परिणाम, उनकी रिसाला-ए-हक़नुमा पुस्तक है। इसमें सच्चे धार्मिक तत्वों का वर्णन है। यह उनका संसार को अनमोल उपहार

है। जो दारा को देखना चाहें वे उन्हें इन पुस्तकों में देखें। इस भ्रम और अन्धकार से भरे भव-सागर से पार उतरने का मार्ग पावें। यहाँ न कोई हिन्दू है न मुसलमान—केवल उस 'एक'—उस खुदा—उस ब्रह्म का अलग-अलग घट में प्रतिविम्ब है। हम छाया के लिये लड़ रहे हैं और वास्तव को भूल रहे हैं। यही उस पूर्ण पुरुष दारा का सन्देश है।

वीणा:—(तान छेड़ती है।)

स्वप्न मेरा खो गया रे,
कौन उसको खोज लाए।

पटा-क्षेप